कार्यालय :–सहायक अभियोजन अधिकारी, न्यायालय न्यायिक मजिस्ट्रेट, ब्यावर

कमांकः– 99 दिनांकः02/06/2026

प्रेषिति :–

श्रीमान निदेशक महोदय,
अभियोजन विभाग,
राजस्थान जयपुर

विषयः–नवीन आपराधिक विधियों (BNS, BNNS, BSA) के प्रभावी कियान्वयन एवं स्मार्ट पुलिसिंग के सम्बन्ध में निर्धारित एजेण्डे के अनुरुप तैयार प्रशिक्षण नोट की प्रति भिजवाने बाबत्।

प्रसंगः–निदेशालय के आदेश संख्या–प.25(1)(1)प्रशिक्षण/विविध/अभि/ 2026 –01279/राजकाज नं0–22435620 दिनांक 26.05.2026 के पालनार्थ।

———00———

महोदय,

उपरोक्त विषय एवं प्रासंगिक आदेश की पालना में सविनय निवेदन हैं कि नवीन आपराधिक विधियों (BNs, BNNS, BSA) के प्रभावी कियान्वयन एवं स्मार्ट पुलिसिंग के सम्बन्ध में प्रशिक्षण देने हेतु अधोहस्ताक्षरकर्ता को नामित किया जाकर, आयोजित प्रशिक्षण के भीतर तैयार प्रशिक्षण नोट की एक प्रति निदेशालय में भिजवाने बाबत् निर्देशित किया गया हैं।

प्राप्त निर्देशों की पालना में तैयार प्रशिक्षण नोट की प्रति इस पत्र के साथ सलंग्न कर श्रीमान जी की सेवा में सादर अवलोकनार्थ प्रेषित हैं।

सलंग्नः–प्रशिक्षण नोट की प्रति उक्तानुसार।

भ व दी य

Priyavrat

{ प्रियव्रत सिंह }
अभियोजन अधिकारी,
न्यायालय न्यायिक मजि0, ब्यावर

——:: प्रशिक्षण नोट ::——

प्रशिक्षण दिनांक :–10.06.2026 **समय :– 01.00 पी0एम0**

01. Arrest पर नवीन न्यायिक दृष्टिकोण –

(क) <u>भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता (BNNS) के अन्तर्गत गिरफ्तारी के मापदण्ड</u>

भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 (BNNS) के अन्तर्गत गिरफ्तारी के मापदण्डों को आधुनिक न्यायिक दृष्टिकोण और प्रकियात्मक निष्पक्षता के अनुसार संशोधित किया गया हैं :–

धारा 35 BNNS (पुरानी धारा 41 दण्ड प्रकिया संहिता) के तहत मापदण्ड

<u>7 वर्ष या उससे कम की सजा वाले मामलें</u> :–यदि अपराध ऐसा हैं, जिसमें 7 वर्ष या उससे कम की सजा का प्रावधान हैं, तो पुलिस अधिकारी सीधे या तत्काल गिरफ्तार नही करेगा। इसके लिए पहले कुछ शर्तो का पूरा होना जरुरी हैं, जैसे :

" पुलिस अधिकारी के पास यह विश्वास करने का कारण हो कि आरोपी ने अपराध किया हैं।"

" गिरफ्तारी आरोपी को आगे कोई अपराध करने से रोकने, जांच को प्रभावित करने या साक्ष्यों के साथ छेड़छाड़ को रोकने के लिए आवश्यक हो।"

(ख) <u>Supreme Court of India द्वारा अनावश्यक गिरफ्तारी पर नियन्त्रण संबंधी निर्देश</u>

अनावश्यक गिरफ्तारी पर नियन्त्रण : माननीय उच्चतम न्यायालय के विभिन्न ऐतिहासिक निर्णयों (जैसे अर्नेश कुमार बनाम बिहार राज्य और हालिया न्यायिक दृष्टिकोण) के अनुसार, पुलिस केवल इसलिए किसी को गिरफ्तार नही कर सकती, क्योंकि उसके पास ऐसा करने की शक्ति हैं।

आवश्यकता का सिद्धान्त : गिरफ्तारी तभी की जानी चाहिए जब वह जांच को तार्किक अंजाम तक पहुंचाने या कानून–व्यवस्था बनाए रखने के लिए अनिवार्य हो।

प्रकियात्मक निष्पक्षता (Procedural Fairness) के तहत अनुपालन आधारित दृष्टिकोण :– नए कानूनों के तहत अदालतों का पूरा जोर प्रकियात्मक निष्पक्षता पर हैं। इसका मतलब हैं कि गिरफ्तारी करते समय आरोपी के अधिकारों की रक्षा, परिजनों को सूचना देना और स्वास्थ्य परीक्षण (Medical Examination) जैसे स्थापित कानूनी मापदण्डों का कडाई से पालन होना चाहिए।

अर्नेश कुमार बनाम बिहार राज्य (2014) के मामलें में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पुलिस द्वारा की जाने वाली यांत्रिक या अंधाधुंध गिरफ्तारी (Mechanical or Casual Arrest) पर कड़ा रुख अपनाया था। इस ऐतिहासिक निर्णय में मुख्य रुप से निम्नलिखित सिद्धान्तों और दिशा-निर्देशों को प्रतिपादित किया –

. माननीय न्यायालय ने स्पष्ट किया कि किसी पुलिस अधिकारी के पास किसी को गिरफ्तार करने की कानूनी शक्ति होना ही काफी नही हैं।

. उस शक्ति का प्रयोग करने के पीछे एक ठोस और तार्किक औचित्य (Justification for arrest) होना अनिवार्य हैं।

इसके अतिरिक्त माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा निम्नांकित मामलों में गिरफ्तारी को लेकर मुख्य सिद्धान्त/निर्देश प्रतिपादित किए हैं –

केस का नाम	मुख्य सिद्धान्त/माननीय न्यायालय का निर्देश
सतेन्द्र कुमार अंतिल (2022)	नोटिस (धारा 35 BNNS) का पालन करने पर गिरफ्तारी पर रोक, प्रकिया का उल्लघंन करने वाले अधिकारियों पर कार्यवाही का निर्देश
डी.के.बसु (1997)	गिरफ्तारी के समय प्रकियात्मक निष्पक्षता (प्रॉपर मेमो, मेडिकल और सूचना देना) की अनिवार्यता
मोहम्मद जुबैर बनाम राज्य (NCT दिल्ली) 2022	मामलें में माननीय सुप्रीम कोर्ट ने दोहराया कि गिरफ्तारी की शक्ति का प्रयोग बहुत ही सोच-समझकर किया जाना चाहिए। पुलिस को केवल किसी को परेशान करने या बिना किसी ठोस कारण के उसकी स्वतन्त्रता छीनने के लिए इसका इस्तेमाल नही करना चाहिए।

<u>(ग) नोटिस ऑफ अपीयरेंस बनाम तत्काल गिरफ्तारी</u> :– कम गंभीर मामलों में तत्काल गिरफ्तारी के बजाय आरोपी को जांच में सहयोग करने के लिए " नोटिस ऑफ अपीयरेंस " जारी किया जाएगा। यदि आरोपी नोटिस की शर्तो का पालन करता हैं और जांच में सहयोग करता हैं, तो उसे तब तक गिरफ्तार नही किया जाएगा जब तक कि इसके ठोस कारण न हो।

गिरफ्तारी बनाम नोटिस : व्यवहारिक तुलनात्मक चार्ट

तत्काल गिरफ्तारी की परिस्थितियां (Circumstances for immediate Arrest)	नोटिस देने की परिस्थितियां (Circumstances for Issuing Notice-Sec 35 BNNS)
गंभीर या जघन्य अपराध –ऐसे मामले जिनमें कानूनन 7 वर्ष से अधिक की सजा, आजीवन कारावास या मृत्युदण्ड का प्रावधान हैं	कम गंभीर अपराध –ऐसे मामलें जिनमें कानूनन 7 वर्ष या उससे कम की सजा का प्रावधान हैं (बशर्ते तत्काल गिरफ्तारी की कोई विशेष शर्त मौजूद ना हो)

दोबारा अपराध करने की आशंका –यदि पुलिस अधिकारी को विश्वसनीय रुप से यह विश्वास हो कि आरोपी को खुला छोडने पर वह कोई अन्य अपराध (Re-Offence) कर सकता हैं।	**प्रथम दृष्टया सहयोग की संभावना** – आरोपी का पिछला रिकार्ड साफ है और उसके भागने या दोबारा अपराध करने की कोई तात्कालिक आशंका नही दिखती।
साक्ष्यों से छेड़छाड़ का खतरा – यदि यह उचित रुप से माना जाए कि आरोपी बाहर रहकर मामलें के सबूतो को नष्ट कर सकता हैं या डिजीटल साक्ष्यों के साथ छेडछाड कर सकता हैं।	**साक्ष्य सुरक्षित होना** – मामलें के मुख्य साक्ष्य, दस्तावेज या डिजीटल सबूत पहले ही पुलिस द्वारा सुरक्षित (Seize) किए जा चुके हैं और आरोपी द्वारा उनसे छेड़छाड़ सम्भव नही हैं।
गवाहो का डराने/धमकाने की संभावना – यदि आरोपी प्रभावशाली हैं और वह मामलें के गवाहों को प्रभावित कर सकता हैं, उन्हें डरा–धमका सकता हैं या लालच दे सकता हैं।	**गवाह सुरक्षित होना** – गवाहों को प्रभावित किए जाने का कोई तात्कालिक खतरा या अंदेशा जांच अधिकारी के सामने नही आया हैं।
जांच में असहयोग या फरार होने का डर –आरोपी जांच से लगातार भाग रहा हो, अपना ठिकाना छुपा रहा हो, या उसके देश/राज्य छोड़कर फरार होने की पूरी आशंका हो	**जांच में पूर्ण सहयोग** – आरोपी का पता ज्ञात हैं और वह पुलिस द्वारा बुलाए जाने पर जांच में शामिल होने तथा सहयोग करने के लिए तैयार हैं।
कोर्ट में उपस्थिति सुनिश्चित करना – जब तक आरोपी को गिरफ्तार न किया जाए, तब तक उसकी कोर्ट में उपस्थिति सुनिश्चित करना असंभव प्रतीत हो रहा हो।	**शर्तों का पालन** – आरोपी नोटिस में दी गई सभी शर्तो (जैसे– बिना बताए शहर न छोडना, जांच में आना) का कडाई से पालन कर रहा हैं।

(घ) **I.O. की जिम्मेवारी एवं रिकार्डिंग of reasons** - जांच अधिकारी के लिए यह अत्यन्त महत्वपूर्ण मापदण्ड हैं कि वह केस डायरी में गिरफ्तारी करने या न करने दोनो ही स्थितियों के ठोस कानूनी कारणों को लिखित रुप में दर्ज (Recording of reasons) करेगा। दर्ज किए गए कारणों को मजिस्ट्रेट के सामनें पेश किया जाता हैं ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि गिरफ्तारी अनावश्यक रुप से नही की गई हैं।

02. Adjournment (स्थगन) पर न्यायालयीन नियन्त्रण – न्यायालयों में मुकदमों के लम्बे समय तक लंबित रहने का एक बडा कारण अनावश्यक स्थगन (**Adjournment**) हैं। नए आपराधिक कानूनों (BNs, BNNS, BSA) का मूल उद्देश्य न्याय प्रकिया को गति देना और " तारीख पे तारीख" की संस्कृति को समाप्त करना हैं। इस सत्र का उद्देश्य अभियोजन पक्ष को अदालती सख्ती के अनुरुप ढालना और त्वरित विचारण सुनिश्चित करना हैं।

(क) अनावश्यक स्थगन पर न्यायालयों की सख्ती –माननीय सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों के हालिया न्यायिक रुझानों के अनुसार, अब अदालते बिना किसी असाधारण या उचित कारण के स्थगन देने के पक्ष में नही हैं। अदालतो द्वारा अनावश्यक स्थगन मांगने वाले पक्ष पर (चाहे वह अभियोजन हो या बचाव पक्ष) भारी जुर्माना या हर्जाना लगाने की प्रवृति बढी हैं ताकि कोर्ट के समय की बर्बादी को रोका जा सके। यदि गवाह न्यायालय में उपस्थित हैं, तो केवल वकील की अनुपलब्धता या तैयारी ना होने के आधार पर स्थगन नही दिया जाएगा। कोर्ट उसी दिन परीक्षण पूरा करने पर जोर देती हैं।

(ख) <u>त्वरित ट्रायल (Speedy Trial) के सिद्धान्त का प्रवर्तन</u> – त्वरित विचारण केवल एक प्रकियात्मक नियम नही हैं, बल्कि यह भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत नागरिक का मौलिक अधिकार हैं। नए कानूनो (BNNS) के अन्तर्गत विभिन्न न्यायिक प्रकियाओं (जैसे आरोप तय करना, निर्णय सुनाना आदि) के लिए स्पष्ट समय–सीमाएं निर्धारित की गई हैं, जिनका अनुपालन अनिवार्य हैं।

(ग) **अभियोजन एवं बचाव पक्ष की जिम्मेवारी** –अनावश्यक स्थगन से बचने और मामलें को गति देने के लिए अभियोजन अधिकारियों को कोर्ट की तारीख से पहले केस डायरी, गवाहों के बयान और इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्यों (जैसे BSA के तहत आवश्यक सर्टिफिकेट) की पूरी जांच कर ले, ताकि तकनीकी आधार पर स्थगन न लेना पडे। यदि बचाव पक्ष जानबुझकर मामलें को लटकाने के लिए बार–बार स्थगन की मांग करता हैं तो अभियोजन को कानून और त्वरित विचारण के सिद्धान्तों का हवाला देते हुए इसका पुरजोर विरोध करना चाहिए।

अदालती कार्यवाही को सुचारु रुप से चलाने और अनावश्यक स्थगन को रोकने के लिए बचाव पक्ष यह प्राथमिक कानूनी जिम्मेदारी हैं कि वह न्याय के सिद्धान्तों और प्रकियात्मक निष्पक्षता का सम्मान करते हुए अदालती कार्यवाही को बिना वजह बाधित ना करे। गवाहों के कोर्ट में उपस्थित होने पर बचाव पक्ष के अधिवक्ता से यह अपेक्षा की जाती हैं कि वे पूरी तैयारी के साथ आएं और बिना किसी ठोस कारण के जिरह को टालने (स्थगन मांगने) का प्रयास ना करे।

03. Evidence Interpretation (साक्ष्य की व्याख्या) – आधुनिक दृष्टिकोण – बदलते तकनीकी परिवेश में अपराधों की प्रकृति भी डिजिटल हो चुकी हैं। इसी को ध्यान में रखते हुए नए भारतीय साक्ष्य अधिनियम (BSA) में इलेक्ट्रॉनिक और डिजिटल साक्ष्यों को प्राथमिक साक्ष्य (Primary Evidence) के समकक्ष लाने और उनकी विश्वसनीयता तय करने के लिए कड़े प्रावधान किए गए हैं। इस नोट का उद्‌देश्य अनुसंधान अधिकारियों व अभियोजकों को डिजिटल साक्ष्य की ग्राह्यता (Admissibility) और विश्वसनीयता (Reliability) के आधुनिक सिद्धान्तों से अवगत कराना हैं।

(क) <u>भारतीय साक्ष्य अधिनियम (BSA) के अंतर्गत डिजिटल/इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य</u>– नए कानून भारतीय साक्ष्य अधिनियम के तहत डिजिटल साक्ष्यों के दायरे को व्यापक बनाया गया हैं। अब केवल कम्प्यूटर आउटपुट ही नही, बल्कि स्मार्टफोन, सर्वर लॉग्स, क्लाउड डेटा, वॉयस रिकॉर्डिंग, और व्हाटसअप/ईमेल संदेशो को भी मुख्य साक्ष्य की श्रेणी में शामिल किया गया हैं।

यदि कोई डिजिटल रिकॉर्ड सीधे उसी उपकरण (जैसे–मोबाईल या लेपटॉप) पर प्रस्तुत किया जाता हैं जिसमें वह मूल रुप से उत्पन्न हुआ था, तो वह प्राथमिक साक्ष्य माना जाता हैं।

यदि मूल उपकरण के बजाए उसका प्रिन्टआउट, सीडी, पेनड्राइव या क्लाउड कॉपी कोई में लाई जाती हैं, तो उसके साथ विशेष प्रमाणीकरण आवश्यक होता हैं।

(ख) <u>साक्ष्य की admissibility और reliability पर हालिया निर्णय</u> – इलेक्ट्रॉनिक और डिजीटल साक्ष्य की ग्राह्ता एवं विश्वसनीयता पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय के कई मील का पत्थर साबित होने वाले निर्णय हैं। इसके अतिरिक्त, हाल ही में लागू हुए भारतीय साक्ष्य अधिनियम के आलोक में भी इन न्यायिक सिद्धान्तों को नया विस्तार मिला हैं।

1. ग्राह्ाता (Admissibility) और अनिवार्यता पर ऐतिहासिक निर्णय

. *अर्जुन पंडितराव खोतकर बनाम कैलाश कुशनराव गोरंटयाल (2020)*

सिद्धान्त – इस तीन जजों की खंडपीठ के ऐतिहासिक निर्णय ने इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य की ग्राह्ता पर सारे भ्रम दूर कर दिए।

निर्णय – कोर्ट ने स्पष्ट किया कि यदि आप अदालत में द्वितीयक साक्ष्य (Secondary Evidence) के रुप में कोई इलेक्ट्रॉनिक रिकार्ड (जैसे– सीडी, पेनड्राइव, प्रिन्टआउट) पेश कर रहे हैं, तो तत्कालीन धारा 65बी (4) (अब भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 63(4)) के तहत प्रमाण पत्र देना अनिवार्य (Mandatory) हैं। इसके बिना साक्ष्य को स्वीकार नही किया जा सकता। हालांकि, यदि मूल उपकरण (Original Device/Primary Evidence) स्वयं कोर्ट में लाया जाता हैं, तो प्रमाण पत्र की आवश्यकता नही हैं।

. *अनवर पी.वी. बनाम पी.के. बशीर (2014)*

सिद्धान्त – इस मामलें में कोर्ट ने माना कि इलेक्ट्रॉनिक रिकार्डस के साथ छेडछाड़ (Tampering/Alteration) करना बहुत आसान हैं। इसलिए, जब तक इसकी प्रमाणिकता सुनिश्चित करने वाले कानूनी सुरक्षा उपायों का पालन नही होता, तब तक ऐसे साक्ष्य के आधार पर मुकदमा चलाना न्याय की विफलता (Travesty of Justice) का कारण बन सकता हैं।

2. प्रमाण पत्र पेश करने के चरण पर निर्णय –

. *कर्नाटक लोकायुक्त पुलिस बनाम एम.आर. हीरेमठ (2019)*

सिद्धान्त – प्रमाण पत्र कब पेश किया जाना चाहिए?

निर्णय – कोर्ट ने स्पष्ट किया कि विवेचना के दौरान या आरोप–पत्र दाखिल करते समय प्रमाण पत्र की कमी एक प्रक्रियात्मक त्रुटि है, जिसे बाद में सुधारा जा सकता हैं। परीक्षण (Trial) के दौरान साक्ष्य को अदालत के रिकार्ड पर 'एक्जिबिट' करने से पहले किसी भी चरण में यह प्रमाण पत्र प्रस्तुत किया जा सकता हैं।

3. डिजिटल साक्ष्य की विश्वसनीयता और क्लोन कॉपी –

पी. गोपालनकृष्णन बनाम केरल राज्य (2020)

सिद्धान्त – अभियुक्त के अधिकार और डिजिटल डेटा की विश्वसनीयता।

निर्णय – माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि किसी मेमोरी कार्ड या पेनड्राइव में मौजूद विडियो फुटेज/क्लिपिंग एक 'दस्तावेज' हैं, न कि केवल एक भौतिक वस्तु। यदि अभियोजन पक्ष इस पर भरोसा कर रहा हैं, तो निष्पक्ष सुनवाई के लिए अभियुक्त को इसकी क्लोन कॉपी (Cloned Copy) दी जानी चाहिए, ताकि वह इसकी विश्वसनीयता की जांच अपने विशेषज्ञ से करा सके (बशर्ते वह गोपनीयता या संवेदनशीलता का उल्लघंन न करे)।

अदालते अब तकनीकी बारिकियों पर बहुत सख्त हैं। **Admissibility के लिए धारा 63(4) का सही प्रारुप में प्रमाण पत्र जरुरी हैं, और reliability** के लिए पुख्ता चेन ऑफ कस्टडी व बिना छेडछाड़ की फॉरेंसिक पुष्टि (Hash Value मिलाना) अनिवार्य हैं।

(ग) Chain of Custody, Certification, Contradiction handling -

Chain of Custody– डिजिटल साक्ष्य के मामलें में "चेन ऑफ कस्टडी" सबसे महत्वपूर्ण पहलू हैं। इसमें साक्ष्य को जब्त करने से लेकर अदालत में पेश करने तक के पूरे सफर का विवरण होता हैं।

. इलेक्ट्रॉनिक डिवाइस (जैसे–फोन, हार्ड डिस्क) को किस स्थान से, किस समय और किसके द्वारा जब्त किया गया।

. सुरक्षित रख–रखाव – डिवाइस को जब्त करने के बाद उसे एंटी–स्टैटिक बैग या फैराडे बैग में सील किया गया ताकि उसमें कोई बाहरी बदलाव या रिमोट डेटा डिलीट न किया जा सके।

. हस्तांतरण का रिकार्ड – फोरेसिंक लैब भेजने और वहां से वापस न्यायालय लाने के दौरान यह साक्ष्य किन–किन अधिकारियों के हाथो से गुजरा, इसका पूरा लिखित रिकार्ड (Log) होना अनिवार्य हैं।

उद्देश्य – न्यायालय को यह आश्वस्त करना कि साक्ष्य के साथ बीच में कोई छेडछाड़ या बदलाव नही किया गया हैं।

Certification (प्रमाणीकरण) - भारतीय साक्ष्य अधिनियम (BSA) के तहत डिजिटल साक्ष्य को प्राथमिक साक्ष्य (Primary Evidence) के रुप में तभी स्वीकार किया जाता हैं, जब वह उचित रुप से प्रमाणित हो।

. नए कानून (BSA) के तहत डिजिटल रिकार्ड की स्वीकार्यता के लिए निर्धारित प्रमाणपत्र (Certificate) की आवश्यकता होती है (जो पूर्व में साक्ष्य अधिनियम की धारा 65बी के समान हैं)।

. प्रमाणपत्र की आवश्यकताएं – यह प्रमाणपत्र उस व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षरित होना चाहिए जो सम्बंधित डिवाइस या कम्प्यूटर सिस्टम के प्रबन्धन/संचालन के लिए जिम्मेदार हैं।

. सामग्री – प्रमाणपत्र में यह स्पष्ट होना चाहिए कि इलेक्ट्रॉनिक रिकार्ड को जिस कम्प्यूटर/डिवाइस से लिया गया हैं, वह सामान्य उपयोग में था और सही तरीके से काम कर रहा था, ताकि उसकी विश्वसनीयता सिद्ध हो सके।

Contradiction handling - जब डिजिटल साक्ष्य और मौखिक गवाही या अन्य साक्ष्यों के बीच कोई विरोधाभास सामने आता हैं, तो उसे कैसे संभाला जाए।

. फोरेंसिक बनाम मौखिक गवाह – यदि कोई गवाह अदालत में अपने बयान से पलटता हैं तो डिजिटल साक्ष्य जैसे–कॉल रिकार्डिंग, व्हाटसएप चैट, सीसीटीपी फुटेज का उपयोग उसकी बात को काटने या उसकी सत्यता को जांचने के लिए किया जाता हैं।

. तकनीकी विरोधाभास – यदि दो डिजिटल साक्ष्यों के बीच (जैसे दो अलग–अलग कैमरों के टाइमस्टैम्प में) कोई विरोधाभास हैं, तो अदालत हालियां न्यायिक निर्णयों के आधार पर उनकी विश्वसनीयता और प्रमाणिकता की जांच करती हैं।

. न्यायालय का दृष्टिकोण – विरोधाभास की स्थिति में अदालत यह देखती हैं कि क्या वह मानवीय भूल (Human error) हैं या साक्ष्य के साथ दुर्भावनापूर्ण छेडछाड़ (Fabrication) की गई हैं।

आधुनिक दृष्टिकोण के तहत, अदालतें अब केवल डिजिटल साक्ष्य के होने भर पर भरोसा नही करती, बल्कि उसकी स्वीकार्यता और विश्वसनीयता को तय करने के लिए इन तीनो प्रकियाओं (**Chain of Custody, Certification, Contradiction handling**) का कडाई से पालन सुनिश्चित करती हैं।

04. New Criminal laws पर Judicial Trends –

(क) भारतीय न्याय संहिता (BNS), भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता (BNNS), भारतीय साक्ष्य अधिनियम (BSA) के Practical interpretation trends – नवीन विधियों के व्यवहारिक व्याख्या रुझानों (Practical interpretation trends) के मुख्य बिन्दु निम्नलिखित हैं –

. अदालतों का मुख्य फोकस – न्यायालयों द्वारा नए कानूनों की व्याख्या करते समय सबसे अधिक जोर प्रकियात्मक निष्पक्षता (Procedural Fairness) और साक्ष्य की गुणवत्ता (Evidence Quality) पर दिया जा रहा हैं।

. प्रकियात्मक निष्पक्षता का व्यवहारिक मतलब के तहत अदालतें यह सुनिश्चित कर रही हैं कि जांच, गिरफ्तारी और तलाशी के दौरान नागरिक अधिकारों व निर्धारित कानूनी प्रक्रियाओं का कडाई से और निष्पक्ष रुप से पालन हो।

. साक्ष्य की गुणवत्ता का व्यवहारिक मतलब – इसके अन्तर्गत अदालतें वैज्ञानिक, डिजिटल और फोरेसिंक साक्ष्यों की विश्वसनीयता, उनके संग्रहण (Collection) के तरीके और उनकी शुद्धता को अत्यधिक महत्व दे रही हैं ताकि साक्ष्य की गुणवत्ता से कोई समझौता न हो।

(ख) Courts का emphasis: procedural fairness+evidence quality- अदालती कार्यवाही में procedural fairness (प्रकियात्मक निष्पक्षता) और evidence quality (साक्ष्य की गुणवत्ता) दो ऐसे स्तम्भ हैं, जिन पर पूरा न्यायशास्त्र टिका हुआ हैं। अगर जांच या कानूनी प्रक्रिया में इनमें से एक भी कमजोर पडता हैं, तो पूरा मामला अदालत में खारिज हो सकता हैं।

. प्रकियात्मक निष्पक्षता (procedural fairness) अदालतें केवल सही फैसले को नही देखती, बल्कि यह भी देखती हैं कि क्या फैसला सही तरीके से लिया गया हैं, यदि प्रकिया दुषित हैं, तो परिणाम भी दुषित माना जाता हैं।

प्राकृतिक न्याय के सिद्धान्त के अन्तर्गत किसी भी व्यक्ति के खिलाफ कार्यवाही करने से पहले उसे अपनी बात रखने, स्पष्टीकरण देने या कारण बताओं नोटिस का जवाब देने का पूरा और उचित अवसर मिलना चाहिए।

जांच या निर्णय लेने वाले अधिकारी का मामलें में कोई व्यक्तिगत, वित्तीय या पेशेवर हित नही होना चाहिए।

. दस्तावेजीकरण और पारदर्शिता (Documentation & Transparency)– कार्यवाही के दौरान लिए गए हर निर्णय का लिखित रिकार्ड होना चाहिए।

आरोपी को उन सभी दस्तावेजो और साक्ष्यों की प्रतियां उपलब्ध करायी जानी चाहिए, जिनका उपयोग उसके खिलाफ किया जा रहा हैं। सामग्री को छिपाना प्रक्रियात्मक अन्याय माना जाता हैं।

. समयबद्धता –प्रक्रिया में बिना किसी ठोस कारण के अत्यधिक देरी नही होनी चाहिए, क्योंकि "देरी से मिला न्याय, न्याय न मिलने के बराबर हैं" **(Justice delayed is justice denied)**।

. साक्ष्य की गुणवत्ता – अदालतें अनुमानों या धारणाओं पर नही, बल्कि ठोस और प्रमाणित साक्ष्यों पर काम करती हैं। साक्ष्य जुटाते समय निम्नलिखित बातों का कडाई से पालन होना चाहिए –

. चैन ऑफ कस्टडी का सख्त पालन :– साक्ष्य (डिजिटल, भौतिक या दस्तावेजी) कहां से मिला, किसने जब्त किया, उसे कहां रखा गया और कोर्ट तक कैसे लाया गया–इसका एक अटूट और प्रमाणित रिकार्ड होना चाहिए। अगर कस्टडी की कड़ी कही भी टूटती हैं, तो साक्ष्य के साथ छेडछाड़ का संदेह पैदा होता हैं।

. कानूनी ग्राहृता – साक्ष्य केवल प्रासंगिक (Relevant) ही नही, बल्कि कानूनन स्वीकार्य भी होना चाहिए। उदाहरण के लिए, बिना उचित सर्च वारन्ट के या अवैध तरीके से जुटाए गए साक्ष्यों को अदालतें खारिज कर सकती हैं।

. गवाहों के बयान – बयान बिना किसी दबाव, प्रलोभन या डराने–धमकाने के दर्ज किए जाने चाहिए। जहां संभव हो, महत्वपूर्ण बयानों की विडियोंग्राफी की जानी चाहिए ताकि उनकी विश्वसनीयता बनी रहे।

05. Key Takeaways for IO & Prosecutors-

(क) Arrest में Compliance-based approach –

. दण्ड प्रकिया संहिता की धारा 41,41ए (तथा भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता के नए प्रावधानों) के तहत कानूनी प्रकियाओं का सख्ती से पालन।

. डी0के0 बसु बनाम पश्चिम बंगाल राज्य मामलें के ऐतिहासिक दिशा–निर्देशों (जैसे अरेस्ट मेमो, परिजनों को सूचना, अनिवार्य मेडिकल) का पूर्ण अनुपालन सुनिश्चित करना ताकि आरोपी को कोई तकनीकी विधिक लाभ न मिल सके।

(ख) Adjournment avoid करने की रणनीति –

• गवाह प्रबन्धन (Witness Management)– कोर्ट की तारीख से पहले गवाहों (विशेषकर चिकित्सकों, नोडल अधिकारियों और स्वतन्त्र गवाहों) को सम्मन तामीली और उनकी पूर्व–तैयारी (Briefing)

• अनावश्यक स्थगन का कडा विरोध – यदि बचाव पक्ष बार–बार समय मांगता है, तो अभियोजक द्वारा लिखित में आपति दर्ज कराना और हर्जाना (Cost) लगाने की मांग करना।

(ग) Evidence handling में standardization -

• भौतिक एवं वैज्ञानिक साक्ष्य – जब्ती से लेकर मालखाना और FSL भेजने तक " chain of custody" को मजबूत बनाए रखना।

• इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य (Digital Evidence) – CCTV, CDR और मोबाईल डेटा के साथ धारा 65बी भारतीय साक्ष्य अधिनियम (या भारतीय साक्ष्य अधिनियम–BSA 63(4)(c) के समरुप प्रावधानों) का प्रमाण पत्र अनिवार्य रुप से सलंग्न करना।

• दस्तावेजी साक्ष्य – चार्जशीट दाखिल करने से पहले ही सभी दस्तावेजों की पठनीयता (Legibility) और प्रमाणन सुनिश्चित करना।

भ व दी य

Priyavrat

{ प्रियव्रत सिंह }
अभियोजन अधिकारी
एमजेएम कोर्ट, ब्यावर

कार्यालय :–अभियोजन अधिकारी, एसीजेएम सं0–02, ब्यावर

क्रमांकः– 98. दिनांकः– 4.6.26.

प्रेषिति :–

श्रीमान निदेशक महोदय,
अभियोजन विभाग,
राजस्थान जयपुर

विषयः–नवीन आपराधिक विधियों (BNS, BNNS, BSA) के प्रभावी क्रियान्वयन एवं स्मार्ट पुलिसिंग के सम्बन्ध में निर्धारित एजेण्डे के अनुरुप तैयार प्रशिक्षण नोट की प्रति भिजवाने बाबत्।

प्रसंगः–निदेशालय के आदेश संख्या–प.25(1)(1)प्रशिक्षण/विविध/अभि/ 2026 –01279/राजकाज नं0–22435620 दिनांक 26.05.2026 के पालनार्थ।

–––00–––

महोदय,

उपरोक्त विषय एवं प्रासंगिक आदेश की पालना में सविनय निवेदन हैं कि नवीन आपराधिक विधियों (BNs, BNNS, BSA) के प्रभावी क्रियान्वयन एवं स्मार्ट पुलिसिंग के सम्बन्ध में प्रशिक्षण देने हेतु अधोहस्ताक्षरकर्ता को नामित किया जाकर, आयोजित प्रशिक्षण के भीतर तैयार प्रशिक्षण नोट की एक प्रति निदेशालय में भिजवाने बाबत् निर्देशित किया गया हैं।

प्राप्त निर्देशों की पालना में तैयार प्रशिक्षण नोट की प्रति इस पत्र के साथ सलंग्न कर श्रीमान जी की सेवा में सादर अवलोकनार्थ प्रेषित हैं।

सलंग्नः–प्रशिक्षण नोट की प्रति उक्तानुसार।

भ व दी य

{ सारिका राज }
अभियोजन अधिकारी,
एसीजेएम सं0–02, ब्यावर

—:: प्रशिक्षण नोट ::—

समय :– 01.00 पी0एम0

प्रशिक्षण दिनांक :–10.06.2026

01. Arrest पर नवीन न्यायिक दृष्टिकोण –

(क) भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता (BNNS) के अन्तर्गत गिरफ्तारी के मापदण्ड

भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 (BNNS) के अन्तर्गत गिरफ्तारी के मापदण्डों को आधुनिक न्यायिक दृष्टिकोण और प्रकियात्मक निष्पक्षता के अनुसार संशोधित किया गया हैं :–

धारा 35 BNNS (पुरानी धारा 41 दण्ड प्रकिया संहिता) के तहत मापदण्ड

7 वर्ष या उससे कम की सजा वाले मामलें :–यदि अपराध ऐसा हैं, जिसमें 7 वर्ष या उससे कम की सजा का प्रावधान हैं, तो पुलिस अधिकारी सीधे या तत्काल गिरफ्तार नही करेगा। इसके लिए पहले कुछ शर्तो का पूरा होना जरुरी हैं, जैसे :

" पुलिस अधिकारी के पास यह विश्वास करने का कारण हो कि आरोपी ने अपराध किया हैं।"

" गिरफ्तारी आरोपी को आगे कोई अपराध करने से रोकने, जांच को प्रभावित करने या साक्ष्यों के साथ छेड़छाड़ को रोकने के लिए आवश्यक हो।"

(ख) Supreme Court of India द्वारा अनावश्यक गिरफ्तारी पर नियन्त्रण संबंधी निर्देश

अनावश्यक गिरफ्तारी पर नियन्त्रण : माननीय उच्चतम न्यायालय के विभिन्न ऐतिहासिक निर्णयों (जैसे अर्नेश कुमार बनाम बिहार राज्य और हालिया न्यायिक दृष्टिकोण) के अनुसार, पुलिस केवल इसलिए किसी को गिरफ्तार नही कर सकती, क्योंकि उसके पास ऐसा करने की शक्ति हैं।

आवश्यकता का सिद्धान्त : गिरफ्तारी तभी की जानी चाहिए जब वह जांच को तार्किक अंजाम तक पहुंचाने या कानून–व्यवस्था बनाए रखने के लिए अनिवार्य हो।

प्रकियात्मक निष्पक्षता (Procedural Fairness) के तहत अनुपालन आधारित दृष्टिकोण :– नए कानूनों के तहत अदालतों का पूरा जोर प्रकियात्मक निष्पक्षता पर हैं। इसका मतलब हैं कि गिरफ्तारी करते समय आरोपी के अधिकारों की रक्षा, परिजनों को सूचना देना और स्वास्थ्य परीक्षण (Medical Examination) जैसे स्थापित कानूनी मापदण्डों का कडाई से पालन होना चाहिए।

अर्नेश कुमार बनाम बिहार राज्य (2014) के मामलें में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पुलिस द्वारा की जाने वाली यांत्रिक या अंधाधुध गिरफ्तारी (Mechanical or Casual Arrest) पर कडा रुख अपनाया था। इस ऐतिहासिक निर्णय में मुख्य रुप से निम्नलिखित सिद्धान्तों और दिशा–निर्देशों को प्रतिपादित किया –

- माननीय न्यायालय ने स्पष्ट किया कि किसी पुलिस अधिकारी के पास किसी को गिरफ्तार करने की कानूनी शक्ति होना ही काफी नही हैं।

- उस शक्ति का प्रयोग करने के पीछे एक ठोस और तार्किक औचित्य (Justification for arrest) होना अनिवार्य हैं।

इसके अतिरिक्त माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा निम्नांकित मामलों में गिरफ्तारी को लेकर मुख्य सिद्धान्त/निर्देश प्रतिपादित किए हैं –

केस का नाम	मुख्य सिद्धान्त/माननीय न्यायालय का निर्देश
सतेन्द्र कुमार अंतिल (2022)	नोटिस (धारा 35 BNNS) का पालन करने पर गिरफ्तारी पर रोक, प्रक्रिया का उल्लघंन करने वाले अधिकारियों पर कार्यवाही का निर्देश
डी.के.बसु (1997)	गिरफ्तारी के समय प्रक्रियात्मक निष्पक्षता (प्रॉपर मेमो, मेडिकल और सूचना देना) की अनिवार्यता
मोहम्मद जुबैर बनाम राज्य (NCT दिल्ली) 2022	मामलें में माननीय सुप्रीम कोर्ट ने दोहराया कि गिरफ्तारी की शक्ति का प्रयोग बहुत ही सोच–समझकर किया जाना चाहिए। पुलिस को केवल किसी को परेशान करने या बिना किसी ठोस कारण के उसकी स्वतन्त्रता छीनने के लिए इसका इस्तेमाल नही करना चाहिए।

<u>(ग) नोटिस ऑफ अर्पीयरेंस बनाम तत्काल गिरफ्तारी</u> :– कम गंभीर मामलों में तत्काल गिरफ्तारी के बजाय आरोपी को जांच में सहयोग करने के लिए " नोटिस ऑफ अपीयरेंस " जारी किया जाएगा। यदि आरोपी नोटिस की शर्तो का पालन करता हैं और जांच में सहयोग करता हैं, तो उसे तब तक गिरफ्तार नही किया जाएगा जब तक कि इसके ठोस कारण न हो।

गिरफ्तारी बनाम नोटिस : व्यवहारिक तुलनात्मक चार्ट

तत्काल गिरफ्तारी की परिस्थितियां (Circumstances for immediate Arrest)	नोटिस देने की परिस्थितियां (Circumstances for Issuing Notice-Sec 35 BNNS)
गंभीर या जघन्य अपराध –ऐसे मामले जिनमें कानूनन 7 वर्ष से अधिक की सजा, आजीवन कारावास या मृत्युदण्ड का प्रावधान हैं	**कम गंभीर अपराध** –ऐसे मामलें जिनमें कानूनन 7 वर्ष या उससे कम की सजा का प्रावधान हैं (बशर्ते तत्काल गिरफ्तारी की कोई विशेष शर्त मौजूद ना हो)

दोबारा अपराध करने की आशंका –यदि पुलिस अधिकारी को विश्वसनीय रुप से यह विश्वास हो कि आरोपी को खुला छोड़ने पर वह कोई अन्य अपराध (Re-Offence) कर सकता हैं।	**प्रथम दृष्टया सहयोग की संभावना** – आरोपी का पिछला रिकार्ड साफ है और उसके भागने या दोबारा अपराध करने की कोई तात्कालिक आशंका नही दिखती।
साक्ष्यों से छेड़छाड़ का खतरा – यदि यह उचित रुप से माना जाए कि आरोपी बाहर रहकर मामलें के सबूतो को नष्ट कर सकता हैं या डिजीटल साक्ष्यों के साथ छेडछाड कर सकता हैं।	**साक्ष्य सुरक्षित होना** – मामलें के मुख्य साक्ष्य, दस्तावेज या डिजीटल सबूत पहले ही पुलिस द्वारा सुरक्षित (Seize) किए जा चुके हैं और आरोपी द्वारा उनसे छेड़छाड़ सम्भव नही हैं।
गवाहो का डराने/धमकाने की संभावना – यदि आरोपी प्रभावशाली हैं और वह मामलें के गवाहों को प्रभावित कर सकता हैं, उन्हें डरा–धमका सकता हैं या लालच दे सकता हैं।	**गवाह सुरक्षित होना** – गवाहों को प्रभावित किए जाने का कोई तात्कालिक खतरा या अंदेशा जांच अधिकारी के सामने नही आया हैं।
जांच में असहयोग या फरार होने का डर –आरोपी जांच से लगातार भाग रहा हो, अपना ठिकाना छुपा रहा हो, या उसके देश/राज्य छोड़कर फरार होने की पूरी आशंका हो	**जांच में पूर्ण सहयोग** – आरोपी का पता ज्ञात हैं और वह पुलिस द्वारा बुलाए जाने पर जांच में शामिल होने तथा सहयोग करने के लिए तैयार हैं।
कोर्ट में उपस्थिति सुनिश्चित करना – जब तक आरोपी को गिरफ्तार न किया जाए, तब तक उसकी कोर्ट में उपस्थिति सुनिश्चित करना असंभव प्रतीत हो रहा हो।	**शर्तो का पालन** – आरोपी नोटिस में दी गई सभी शर्तो (जैसे– बिना बताए शहर न छोडना, जांच में आना) का कडाई से पालन कर रहा हैं।

(घ) **<u>I.O. की जिम्मेवारी एवं रिकार्डिंग of reasons</u> -** जांच अधिकारी के लिए यह अत्यन्त महत्वपूर्ण मापदण्ड हैं कि वह केस डायरी में गिरफ्तारी करने या न करने दोनो ही स्थितियों के ठोस कानूनी कारणों को लिखित रुप में दर्ज (Recording of reasons) करेगा। दर्ज किए गए कारणों को मजिस्ट्रेट के सामनें पेश किया जाता हैं ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि गिरफ्तारी अनावश्यक रुप से नही की गई हैं।

02. <u>Adjournment (स्थगन) पर न्यायालयीन नियन्त्रण</u> – न्यायालयों में मुकदमों के लम्बे समय तक लंबित रहने का एक बडा कारण अनावश्यक स्थगन (**Adjournment**) हैं। नए आपराधिक कानूनों (BNs, BNNS, BSA) का मूल उद्देश्य न्याय प्रक्रिया को गति देना और " तारीख पे तारीख" की संस्कृति को समाप्त करना हैं। इस सत्र का उद्देश्य अभियोजन पक्ष को अदालती सख्ती के अनुरुप ढालना और त्वरित विचारण सुनिश्चित करना हैं।

(क) अनावश्यक स्थगन पर न्यायालयों की सख्ती –माननीय सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों के हालिया न्यायिक रुझानों के अनुसार, अब अदालते बिना किसी असाधारण या उचित कारण के स्थगन देने के पक्ष में नही हैं। अदालतो द्वारा अनावश्यक स्थगन मांगने वाले पक्ष पर (चाहे वह अभियोजन हो या बचाव पक्ष) भारी जुर्माना या हर्जाना लगाने की प्रवृति बढी हैं ताकि कोर्ट के समय की बर्बादी को रोका जा सके। यदि गवाह न्यायालय में उपस्थित हैं, तो केवल वकील की अनुपलब्धता या तैयारी ना होने के आधार पर स्थगन नही दिया जाएगा। कोर्ट उसी दिन परीक्षण पूरा करने पर जोर देती हैं।

(ख) <u>त्वरित ट्रायल (Speedy Trial) के सिद्धान्त का प्रवर्तन</u> – त्वरित विचारण केवल एक प्रकियात्मक नियम नही हैं, बल्कि यह भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत नागरिक का मौलिक अधिकार हैं। नए कानूनो (BNNS) के अन्तर्गत विभिन्न न्यायिक प्रकियाओं (जैसे आरोप तय करना, निर्णय सुनाना आदि) के लिए स्पष्ट समय–सीमाएं निर्धारित की गई हैं, जिनका अनुपालन अनिवार्य हैं।

(ग) <u>अभियोजन एवं बचाव पक्ष की जिम्मेवारी</u> –अनावश्यक स्थगन से बचने और मामलें को गति देने के लिए अभियोजन अधिकारियों को कोर्ट की तारीख से पहले केस डायरी, गवाहों के बयान और इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्यों (जैसे BSA के तहत आवश्यक सर्टिफिकेट) की पूरी जांच कर ले, ताकि तकनीकी आधार पर स्थगन न लेना पडे। यदि बचाव पक्ष जानबुझकर मामलें को लटकाने के लिए बार–बार स्थगन की मांग करता हैं तो अभियोजन को कानून और त्वरित विचारण के सिद्धान्तों का हवाला देते हुए इसका पुरजोर विरोध करना चाहिए।

अदालती कार्यवाही को सुचारु रुप से चलाने और अनावश्यक स्थगन को रोकने के लिए बचाव पक्ष यह प्राथमिक कानूनी जिम्मेदारी हैं कि वह न्याय के सिद्धान्तों और प्रकियात्मक निष्पक्षता का सम्मान करते हुए अदालती कार्यवाही को बिना वजह बाधित ना करे। गवाहों के कोर्ट में उपस्थित होने पर बचाव पक्ष के अधिवक्ता से यह अपेक्षा की जाती हैं कि वे पूरी तैयारी के साथ आएं और बिना किसी ठोस कारण के जिरह को टालने (स्थगन मांगने) का प्रयास ना करे।

03. Evidence Interpretation (साक्ष्य की व्याख्या) – आधुनिक दृष्टिकोण – बदलते तकनीकी परिवेश में अपराधों की प्रकृति भी डिजिटल हो चुकी हैं। इसी को ध्यान में रखते हुए नए भारतीय साक्ष्य अधिनियम (BSA) में इलेक्ट्रॉनिक और डिजिटल साक्ष्यों को प्राथमिक साक्ष्य (Primary Evidence) के समकक्ष लाने और उनकी विश्वसनीयता तय करने के लिए कड़े प्रावधान किए गए हैं। इस नोट का उद्देश्य अनुसंधान अधिकारियों व अभियोजकों को डिजिटल साक्ष्य की ग्राह्यता (Admissibility) और विश्वसनीयता (Reliability) के आधुनिक सिद्धान्तों से अवगत कराना हैं।

(क) <u>भारतीय साक्ष्य अधिनियम (BSA) के अंतर्गत डिजिटल/इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य</u>– नए कानून भारतीय साक्ष्य अधिनियम के तहत डिजिटल साक्ष्यों के दायरे को व्यापक बनाया गया हैं। अब केवल कम्प्यूटर आउटपुट ही नही, बल्कि स्मार्टफोन, सर्वर लॉग्स, क्लाउड डेटा, वॉयस रिकॉर्डिंग, और व्हाटसअप/ईमेल संदेशो को भी मुख्य साक्ष्य की श्रेणी में शामिल किया गया हैं।

यदि कोई डिजिटल रिकॉर्ड सीधे उसी उपकरण (जैसे–मोबाईल या लेपटॉप) पर प्रस्तुत किया जाता हैं जिसमें वह मूल रुप से उत्पन्न हुआ था, तो वह प्राथमिक साक्ष्य माना जाता हैं।

यदि मूल उपकरण के बजाए उसका प्रिन्टआउट, सीडी, पेनड्राइव या क्लाउड कॉपी कोर्ट में लाई जाती है, तो उसके साथ विशेष प्रमाणीकरण आवश्यक होता है।

(ख) <u>साक्ष्य की admissibility और reliability पर हालिया निर्णय</u> – इलेक्ट्रॉनिक और डिजीटल साक्ष्य की ग्राह्यता एवं विश्वसनीयता पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय के कई मील का पत्थर साबित होने वाले निर्णय हैं। इसके अतिरिक्त, हाल ही में लागू हुए भारतीय साक्ष्य अधिनियम के आलोक में भी इन न्यायिक सिद्धान्तों को नया विस्तार मिला है।

1. ग्राह्यता (Admissibility) और अनिवार्यता पर ऐतिहासिक निर्णय

• *अर्जुन पंडितराव खोतकर बनाम कैलाश कुशनराव गोरंट्याल (2020)*

सिद्धान्त – इस तीन जजों की खंडपीठ के ऐतिहासिक निर्णय ने इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य की ग्राह्यता पर सारे भ्रम दूर कर दिए।

निर्णय – कोर्ट ने स्पष्ट किया कि यदि आप अदालत में द्वितीयक साक्ष्य (Secondary Evidence) के रुप में कोई इलेक्ट्रॉनिक रिकार्ड (जैसे– सीडी, पेनड्राइव, प्रिन्टआउट) पेश कर रहे हैं, तो तत्कालीन धारा 65बी (4) (अब भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 63(4)) के तहत प्रमाण पत्र देना अनिवार्य (Mandatory) हैं। इसके बिंना साक्ष्य को स्वीकार नही किया जा सकता। हालांकि, यदि मूल उपकरण (Original Device/Primary Evidence) स्वयं कोर्ट में लाया जाता हैं, तो प्रमाण पत्र की आवश्यकता नही हैं।

• *अनवर पी.वी. बनाम पी.के. बशीर (2014)*

सिद्धान्त – इस मामलें में कोर्ट ने माना कि इलेक्ट्रॉनिक रिकार्डस के साथ छेडछाड़ (Tampering/Alteration) करना बहुत आसान हैं। इसलिए, जब तक इसकी प्रमाणिकता सुनिश्चित करने वाले कानूनी सुरक्षा उपायों का पालन नही होता, तब तक ऐसे साक्ष्य के आधार पर मुकदमा चलाना न्याय की विफलता (Travesty of Justice) का कारण बन सकता हैं।

2. प्रमाण पत्र पेश करने के चरण पर निर्णय –

• *कर्नाटक लोकायुक्त पुलिस बनाम एम.आर. हीरेमठ (2019)*

सिद्धान्त – प्रमाण पत्र कब पेश किया जाना चाहिए?

निर्णय – कोर्ट ने स्पष्ट किया कि विवेचना के दौरान या आरोप–पत्र दाखिल करते समय प्रमाण पत्र की कमी एक प्रकियात्मक त्रुटि है, जिसे बाद में सुधारा जा सकता हैं। परीक्षण (Trial) के दौरान साक्ष्य को अदालत के रिकार्ड पर 'एक्जिबिट' करने से पहले किसी भी चरण में यह प्रमाण पत्र प्रस्तुत किया जा सकता हैं।

3. डिजिटल साक्ष्य की विश्वसनीयता और क्लोन कॉपी –

पी. गोपालनकृष्णन बनाम केरल राज्य (2020)

सिद्धान्त – अभियुक्त के अधिकार और डिजिटल डेटा की विश्वसनीयता।

निर्णय – माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि किसी मेमोरी कार्ड या पेनड्राइव में मौजूद विडियो फुटेज/क्लिपिंग एक 'दस्तावेज' हैं, न कि केवल एक भौतिक वस्तु। यदि अभियोजन पक्ष इस पर भरोसा कर रहा हैं, तो निष्पक्ष सुनवाई के लिए अभियुक्त को इसकी क्लोन कॉपी (Cloned Copy) दी जानी चाहिए, ताकि वह इसकी विश्वसनीयता की जांच अपने विशेषज्ञ से करा सके (बशर्ते वह गोपनीयता या संवेदनशीलता का उल्लघंन न करे)।

अदालते अब तकनीकी बारिकियों पर बहुत सख्त हैं। **Admissibility के लिए धारा 63(4) का सही प्रारुप में प्रमाण पत्र जरुरी हैं, और reliability** के लिए पुख्ता चेन ऑफ कस्टडी व बिना छेडछाड़ की फॉरेंसिक पुष्टि (Hash Value मिलाना) अनिवार्य हैं।

(ग) Chain of Custody, Certification, Contradiction handling -

Chain of Custody– डिजिटल साक्ष्य के मामलें में "चेन ऑफ कस्टडी" सबसे महत्वपूर्ण पहलू हैं। इसमें साक्ष्य को जब्त करने से लेकर अदालत में पेश करने तक के पूरे सफर का विवरण होता हैं।

. इलेक्ट्रॉनिक डिवाइस (जैसे–फोन, हार्ड डिस्क) को किस स्थान से, किस समय और किसके द्वारा जब्त किया गया।

. सुरक्षित रख–रखाव – डिवाइस को जब्त करने के बाद उसे एंटी–स्टैटिक बैग या फैराडे बैग में सील किया गया ताकि उसमें कोई बाहरी बदलाव या रिमोट डेटा डिलीट न किया जा सके।

. हस्तांतरण का रिकार्ड – फोरेसिंक लैब भेजने और वहां से वापस न्यायालय लाने के दौरान यह साक्ष्य किन–किन अधिकारियों के हाथो से गुजरा, इसका पूरा लिखित रिकार्ड (Log) होना अनिवार्य हैं।

उद्देश्य – न्यायालय को यह आश्वस्त करना कि साक्ष्य के साथ बीच में कोई छेड़छाड़ या बदलाव नही किया गया हैं।

Certification (प्रमाणीकरण) - भारतीय साक्ष्य अधिनियम (BSA) के तहत डिजिटल साक्ष्य को प्राथमिक साक्ष्य (Primary Evidence) के रुप में तभी स्वीकार किया जाता हैं, जब वह उचित रुप से प्रमाणित हो।

. नए कानून (BSA) के तहत डिजिटल रिकार्ड की स्वीकार्यता के लिए निर्धारित प्रमाणपत्र (Certificate) की आवश्यकता होती है (जो पूर्व में साक्ष्य अधिनियम की धारा 65बी के समान हैं)।

. प्रमाणपत्र की आवश्यकताएं – यह प्रमाणपत्र उस व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षरित होना चाहिए जो सम्बंधित डिवाइस या कम्प्यूटर सिस्टम के प्रबन्धन/संचालन के लिए जिम्मेदार हैं।

. सामग्री – प्रमाणपत्र में यह स्पष्ट होना चाहिए कि इलेक्ट्रॉनिक रिकार्ड को जिस कम्प्यूटर/डिवाइस से लिया गया हैं, वह सामान्य उपयोग में था और सही तरीके से काम कर रहा था, ताकि उसकी विश्वसनीयता सिद्ध हो सके।

Contradiction handling - जब डिजिटल साक्ष्य और मौखिक गवाही या अन्य साक्ष्यों के बीच कोई विरोधाभास सामने आता हैं, तो उसे कैसे संभाला जाए।

. फोरेंसिक बनाम मौखिक गवाह – यदि कोई गवाह अदालत में अपने बयान से पलटता हैं तो डिजिटल साक्ष्य जैसे–कॉल रिकार्डिंग, व्हाटसएप चैट, सीसीटीपी फुटेज का उपयोग उसकी बात को काटने या उसकी सत्यता को जांचने के लिए किया जाता हैं।

. तकनीकी विरोधाभास – यदि दो डिजिटल साक्ष्यों के बीच (जैसे दो अलग–अलग कैमरों के टाइमस्टैम्प में) कोई विरोधाभास हैं, तो अदालत हालियां न्यायिक निर्णयों के आधार पर उनकी विश्वसनीयता और प्रमाणिकता की जांच करती हैं।

. न्यायालय का दृष्टिकोण – विरोधाभास की स्थिति में अदालत यह देखती हैं कि क्या वह मानवीय भूल (Human error) हैं या साक्ष्य के साथ दुर्भावनापूर्ण छेड़छाड़ (Fabrication) की गई हैं।

आधुनिक दृष्टिकोण के तहत, अदालतें अब केवल डिजिटल साक्ष्य के होने भर पर भरोसा नही करती, बल्कि उसकी स्वीकार्यता और विश्वसनीयता को तय करने के लिए इन तीनो प्रकियाओं (**Chain of Custody, Certification, Contradiction handling**) का कडाई से पालन सुनिश्चित करती हैं।

04. New Criminal laws पर Judicial Trends –

(क) भारतीय न्याय संहिता (BNS), भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता (BNNS), भारतीय साक्ष्य अधिनियम (BSA) के Practical interpretation trends – नवीन विधियों के व्यवहारिक व्याख्या रुझानों (Practical interpretation trends) के मुख्य बिन्दु निम्नलिखित हैं –

. अदालतों का मुख्य फोकस – न्यायालयों द्वारा नए कानूनों की व्याख्या करते समय सबसे अधिक जोर प्रकियात्मक निष्पक्षता (Procedural Fairness) और साक्ष्य की गुणवत्ता (Evidence Quality) पर दिया जा रहा हैं।

. प्रकियात्मक निष्पक्षता का व्यवहारिक मतलब के तहत अदालतें यह सुनिश्चित कर रही हैं कि जांच, गिरफ्तारी और तलाशी के दौरान नागरिक अधिकारों व निर्धारित कानूनी प्रकियाओं का कडाई से और निष्पक्ष रुप से पालन हो।

. साक्ष्य की गुणवत्ता का व्यवहारिक मतलब – इसके अन्तर्गत अदालतें वैज्ञानिक, डिजिटल और फोरेसिंक साक्ष्यों की विश्वसनीयता, उनके संग्रहण (Collection) के तरीके और उनकी शुद्धता को अत्यधिक महत्व दे रही हैं ताकि साक्ष्य की गुणवत्ता से कोई समझौता न हो।

(ख) Courts का emphasis: procedural fairness+evidence quality- अदालती कार्यवाही में procedural fairness (प्रकियात्मक निष्पक्षता) और evidence quality (साक्ष्य की गुणवत्ता) दो ऐसे स्तम्भ हैं, जिन पर पूरा न्यायशास्त्र टिका हुआ हैं। अगर जांच या कानूनी प्रकिया में इनमें से एक भी कमजोर पडता हैं, तो पूरा मामला अदालत में खारिज हो सकता हैं।

. प्रकियात्मक निष्पक्षता (procedural fairness) अदालतें केवल सही फैसले को नही देखती, बल्कि यह भी देखती हैं कि क्या फैसला सही तरीके से लिया गया हैं, यदि प्रक्रिया दुषित हैं, तो परिणाम भी दुषित माना जाता हैं।

प्राकृतिक न्याय के सिद्धान्त के अन्तर्गत किसी भी व्यक्ति के खिलाफ कार्यवाही करने से पहले उसे अपनी बात रखने, स्पष्टीकरण देने या कारण बताओं नोटिस का जवाब देने का पूरा और उचित अवसर मिलना चाहिए।

जांच या निर्णय लेने वाले अधिकारी का मामलें में कोई व्यक्तिगत, वित्तीय या पेशेवर हित नही होना चाहिए।

. दस्तावेजीकरण और पारदर्शिता (Documentation & Transparency)– कार्यवाही के दौरान लिए गए हर निर्णय का लिखित रिकार्ड होना चाहिए।

आरोपी को उन सभी दस्तावेजो और साक्ष्यों की प्रतियां उपलब्ध कराई जानी चाहिए, जिनका उपयोग उसके खिलाफ किया जा रहा है। सामग्री को छिपाना प्रक्रियात्मक अन्याय माना जाता है।

. समयबद्धता –प्रकिया में बिना किसी ठोस कारण के अत्यधिक देरी नही होनी चाहिए, क्योंकि "देरी से मिला न्याय, न्याय न मिलने के बराबर है" **(Justice delayed is justice denied)**।

. साक्ष्य की गुणवत्ता – अदालतें अनुमानों या धारणाओं पर नही, बल्कि ठोस और प्रमाणित साक्ष्यों पर काम करती हैं। साक्ष्य जुटाते समय निम्नलिखित बातों का कड़ाई से पालन होना चाहिए –

. चैन ऑफ कस्टडी का सख्त पालन :– साक्ष्य (डिजिटल, भौतिक या दस्तावेजी) कहां से मिला, किसने जब्त किया, उसे कहां रखा गया और कोर्ट तक कैसे लाया गया–इसका एक अटूट और प्रमाणित रिकार्ड होना चाहिए। अगर कस्टडी की कड़ी कही भी टूटती हैं, तो साक्ष्य के साथ छेडछाड़ का संदेह पैदा होता हैं।

. कानूनी ग्राह्‌ता – साक्ष्य केवल प्रासंगिक (Relevant) ही नही, बल्कि कानूनन स्वीकार्य भी होना चाहिए। उदाहरण के लिए, बिना उचित सर्च वारन्ट के या अवैध तरीके से जुटाए गए साक्ष्यों को अदालतें खारिज कर सकती हैं।

. गवाहों के बयान – बयान बिना किसी दबाव, प्रलोभन या डराने–धमकाने के दर्ज किए जाने चाहिए। जहां संभव हो, महत्वपूर्ण बयानों की विडियोंग्राफी की जानी चाहिए ताकि उनकी विश्वसनीयता बनी रहे।

05. Key Takeaways for IO & Prosecutors-

(क) Arrest में Compliance-based approach –

. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 41,41ए (तथा भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता के नए प्रावधानों) के तहत कानूनी प्रकियाओं का सख्ती से पालन।

. डी0के0 बसु बनाम पश्चिम बंगाल राज्य मामलें के ऐतिहासिक दिशा–निर्देशों (जैसे अरेस्ट मेमो, परिजनों को सूचना, अनिवार्य मेडिकल) का पूर्ण अनुपालन सुनिश्चित करना ताकि आरोपी को कोई तकनीकी विधिक लाभ न मिल सके।

(ख) Adjournment avoid करने की रणनीति –

. गवाह प्रबन्धन (Witness Management)– कोर्ट की तारीख से पहले गवाहों (विशेषकर चिकित्सकों, नोडल अधिकारियों और स्वतन्त्र गवाहों) को सम्मन तामीली और उनकी पूर्व–तैयारी (Briefing)

. अनावश्यक स्थगन का कड़ा विरोध – यदि बचाव पक्ष बार–बार समय मांगता है, तो अभियोजक द्वारा लिखित में आपति दर्ज कराना और हर्जाना (Cost) लगाने की मांग करना।

(ग) Evidence handling में standardization -

. भौतिक एवं वैज्ञानिक साक्ष्य – जब्ती से लेकर मालखाना और FSL भेजने तक "chain of custody" को मजबूत बनाए रखना।

. इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य (Digital Evidence) – CCTV, CDR और मोबाईल डेटा के साथ धारा 65बी भारतीय साक्ष्य अधिनियम (या भारतीय साक्ष्य अधिनियम–BSA के समरुप प्रावधानों) का प्रमाण पत्र अनिवार्य रुप से सलंग्न करना।

. दस्तावेजी साक्ष्य – चार्जशीट दाखिल करने से पहले ही सभी दस्तावेजों की पठनीयता (Legibility) और प्रमाणन सुनिश्चित करना।

क्रमांकः—1239 दिनांकः—05.06.2026

सेवामें,

श्रीमान् अतिरिक्त निदेशक अभियोजन,
(न्याय) राजस्थान, जयपुर।

विषयः—दिनांक 08.06.2026 से दिनांक 12.06.2026 तक आयोजित ऑनलाईन प्रशिक्षण के संबंध में प्रशिक्षण नोट भिजवाने बाबत।

प्रसंगः—श्रीमान के पत्रांक प.25(1)(1)प्रशिक्षण/विविध/अभि/2026—01279 ई हस्ताक्षरित दिनांक 26.05.2026 के क्रम में।

महोदय,

उपरोक्त विषयान्तर्गत सादर निवेदन है कि श्रीमान् के आदेशानुसार प्रशिक्षण हेतु नवीन आपराधिक विधियों यथा भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता 2023, भारतीय न्याय संहिता 2023, एंव भारतीय साक्ष्य अधिनियम 2023, के प्रभावी क्रियान्वयन एंव स्मार्ट पुलिसिंग के संबध में मुख्य सचीव महोदय की अध्यक्षता में दिनांक 01.04.2026 को आयोजित बैठक में प्रदत निर्देशों की पालना में नामित अधिकारी को प्रशिक्षण नोट तैयार कर दिनांक 05.06.2026 तक एक प्रति निदेशालय को भिजवाये जाने हेतु निर्देशित किया गया है। जिसकी पालना में प्रार्थी द्वारा एजेण्डा अनुसार प्रशिक्षण नोट तैयार किया जाकर आगामी कार्यवाही हेतु श्रीमान् को सादर प्रेषित है।
संलग्नः—उपरोक्तानुसार।

भवदीय

(हितेश कुमार गुप्ता)
सहायक निदेशक अभियोजन
उदयपुर (राज.)

Signed by: HITESH KUMAR GUPTA,
Prosecuting Officer
Date: 2026-06-05
16:06:15 +05:30
v-1.0

RajKaj Ref No.:
22676937

दिनांक 08.06.2026 से दिनांक 12.06.2026 तक सहायक निदेशक अभियोजन/अभियोजन अधिकारी/ सहायक अभियोजन अधिकारी का ऑनलाईन प्रशिक्षण के सम्बन्ध में प्रशिक्षण नोट

(क) Arrest पर नवीन न्यायिक दृष्टिकोण –
भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 (BNSS) के लागू होने के बाद गिरफ्तारी के संबंध में न्यायालयों का दृष्टिकोण पहले ही तुलना में अधिक–संरक्षक (rights - oriented) और गिरफ्तारी – विरोधी–(Aanti-routine arrest) हो गया है।

(1) गिरफ्तारी अब सामान्य नियम नहीं हैं–
माननीय उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट किया है कि केवल इसलिए गिरफ्तारी नहीं की जा सकती कि पुलिस के पांस गिरफ्तारी की शक्ति है। गिरफ्तारी तभी की जानी चाहिए जब वह जाँच के लिए वास्तव में आवश्यक है।
– सत्पेन्द्र कुमार अंतिल V/S CBI

(2) सात वर्ष तक जी सजा वाले मामलों में नोटिस प्राथमिक नियम– BNSS की धारा 35 के अनुसार, यदि अपराध की अधिकतम सजा सात वर्ष तक है, तो पहले उपस्थिति का नोटिस दिया जाना चाहिए सीधे गिरफ्तारी करना अपवाद है, नियम नहीं–
–अरनेश कुमार V/S स्टेट ऑफ बिहार AIR 2014 SC 276

(3) गिरफ्तारी के कारण लिखित रूप में बताना अनिवार्य– माननीय उच्चतम न्यायालय ने माना है कि आरोपी को गिरफ्तारी के आधार लिखित रूप में बताना संवैधानिक आवश्यकता है। यदि गिरफ्तारी के वास्तविक आधार नहीं बताए जाते है, तो गिरफ्तारी और रिमाण्ड दोनो प्रभावित हो सकते है – <u>धारा 47 BNSS</u> Art 21 व 22 भारत का संविधान आरोपी को सुरक्षा प्रदान करता है।

–विहान कुमार V/S हरियाणा राज्य (2025) SCC, 779
–प्रबीर पुरकायस्था बनाम N.ct दिल्ली (2024) 8 SCC 254
–पंकज बंसल बनाम भारत संघ और अन्य – (2024)7 SCC 576
–मिहिर राजेश शाह बनाम महाराष्ट्र राज्य 2025

(4) पुलिस को "आवश्यकता" सिद्ध करनी होगी–

धारा 35 BNSS के तहत पुलिस अधिकारी को यह रिकॉर्ड करना होगा कि गिरफ्तारी क्यों आवश्यक है। उदाहरणार्थ

–आगे अपराध रोकने के लिए
–साक्ष्य सुरक्षित रखने के लिए
–गवाहों को प्रभावित करने से रोकने के लिए
–आरोपी की न्यायालय में उपस्थिति सुनिश्चित करने के लिए
–आरोपी की पहचान स्थापित करने के लिए

निष्कर्ष गिरफ्तारी अंतिम उपाय होनी चाहिए, प्रथम उपाय नही पुलिस को गिरफ्तारी की वैधानिक शक्ति होने के साथ– 2 उसकी आवश्यकता भी न्यायालय के समझ प्रदर्शित करनी होगी यदि गिरफ्तारी बिना पर्याप्त कारण बिना नोटिस (जहा–आवश्यक हो) या बिना लिखित आधार बताऐ की जाती है, तो न्यायालय उसे अवैध मान सकता है।

–D.K वासु V/S स्टेट ऑफ वेस्ट बंगाल । AIR 1997 SC 610
–अरनेश कुमार V/S बिहार राज्य AIR 2014 SC 2756 में माननीय उच्चतम न्यायालय ने निर्देश दिये कि

(क) स्वतः गिरफ्तारी नहीं होगी – केवल FIR दर्ज हो जाने मात्र से गिरफ्तारी नहीं ही जा सकती। पुलिस अधिकारी को यह संतुष्ट होना होगा कि गिरफ्तारी वास्तव में आवश्यक है

(ख) गिरफ्तारी के कारण लिखित रूप में दर्ज करना अनिवार्य है।

(ग) नोटिस देकर बुलाना प्राथमिक उपाय है – सात वर्ष तक की सजा वाले मामलों में पहले उपस्थिति नोटिस दिया जाना चाहिए

(घ) मजिस्ट्रेट यांत्रिक ढ़ंग से रिमाण्ड नही दे सकता, मजिस्ट्रेट को यह जाँचना होगा कि गिरफ्तारी के कारण वैध है या नहीं

(ड) अनुपालना न करने पर पुलिस अधिकारी एवं मजिस्ट्रेट के विरुद्ध कार्यवाही हो सकती है।

(ख) – Adjournment (स्थगन) पर न्यायालयीन नियन्त्रण– मुख्य प्रावधान धारा 346 BNSS (पूर्व में धारा 309 CRPC)

–दिनप्रतिदिन सुनवाई का सिद्वान्त– जब गवाह उपस्थित हो तो कार्यवाही यथासंभव दिन प्रतिदिन चलेगी।

– अगले दिन से आगे की दिनांक तभी दी जा सकती है जब न्यायालय लिखित कारण दर्ज करे।

(ग) –गवाह उपस्थित होने पर स्थगन नही–

–यदि गवाह न्यायालय में उपस्थित है तो सामान्यतः स्थगन नहीं दिया जाएगा।

–केवल विशेष कारण होने पर ही लिखित आदेश के साथ स्थगन दिया जा सकता हैं

(घ) अधिकतम दो स्थगनः–

–जब किसी पक्ष की मांग पर तभी स्थगन दिया जा सकता है जब परिस्थितिया उसके नियन्त्रण से बाहर हो।

–ऐसी स्थिति में भी सामान्यतः दो से अधिक स्थगन नही दिए जा सकते।

(ड) वकील का दूसरे न्यायालय में व्यस्त होना आधार नही हैं। अधिवक्ता का किसी अन्य न्यायालय में व्यस्त होना स्थगन का वैध आधार नहीं है

क) –पक्षकार या वकील तैयार न हो तो भी गवाही दर्ज हो सकती है।

यदि गवाह उपस्थित है और पक्षकार या उसका अधिवक्ता अनुपस्थित है अथवा जिरह के लिए तैयार नहीं है, तो न्यायालय गवाही दर्ज कर सकता है।

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अपने निर्णयों में कहा है कि अनावश्यक स्थगन न्याय के प्रशासन में बाधा है तथा न्यायालयों को स्थगन देने में कठोर दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। धारा 346 BNSS का उद्देश्य मुकदमों में देरी रोकना और शीघ्र न्याय सुनिश्चित करना है।

विनोद कुमार V/S पंजाब राज्म– आपराधिक अपील 554 / 12 निर्णय – 23–9–2014 में माननीय उच्चतम न्यायालय ने कहां है कि स्थगन जो कभी एक मामूली समस्या भी, समय बितने के साथ–2 एक घातक बीमारी में बदल गई है।

–त्वरित ट्रायल के सिद्वान्त का प्रवर्तन–

त्वरित विचारण का सिद्वान्त भारतीय विधि में अभियुक्त के मौलिक अधिकार का हिस्सा माना गया है इसका आधार भारतीय संविधान के अनुच्छेद में निहित है।

निर्णय–हुसैना खातुन V/S बिहार राज्य AIR 1979 Page 1369

A-R अतुले V/S R.S नायक AIR 1988 Page 1531

धारा 262 BNSS - 60 दिवस के भीतर उन्मोचन के लिये आवेदन

धारा 262 BNSS - अभियुक्त के विरूद्व आरोप की पहली सुनवाई की तारीख से 60 दिन की अवधि के भितर लिखित रूप में विरचित करेगा।

–भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता 2023 मे स्पीडी ट्रायल नाम से अलग धारा नही है, परन्तु कई प्रावधान विलम्ब कम करने के उद्देश्य से बनाए गए है जैसे

– आरोप पत्र एवं कार्यवाही का डिजिटलीकरण

– समन/वारण्ट की इलेक्ट्रोनिक सेवा

– गवाही की विडियो कॉन्फ्रेंसिंग से परीक्षा

– अनावश्यक स्थगनों पर नियन्त्रण

– विचारण को यथासंभव निरन्तर चलाने की अपेक्षा

जांच अधिकारी एवं अभियोजक के लिए मुख्य बिन्दु

–अनावश्यक स्थगन से बचे

–समय पर अनुसंधान पूरा करें

–गवाहो की उपस्थिति सुनिश्चित करें।

–केस डायरी एवं दस्तावेजों में विलम्ब न करें।

–स्पीडी ट्रायल (Speedy Trial) के प्रवर्तन हेतु महत्वपूर्ण प्रावधान

धार 346 BNSS –स्थगन पर नियंत्रण त्वरित न्याय का महत्व प्रावधान है।

साक्ष्य की व्याख्या – आधुनिक दृष्टिकोण

साक्ष्य को केवल न्यायालय में दिए गए मौखिक बयानों या कागजी दस्तावेजों तक सीमित नहीं माना जाता आधुनिक दृष्टिकोण के अनुसार–

साक्ष्य वह समस्त सामग्री है जो किसी विवादित तथ्य के अस्तित्व या अनस्तित्व के संबंध में न्यायालय के मन में विश्वास उत्पन्न करें या उसके निर्णय को प्रमाणित करें

आधुनिक दृष्टिकोण में साक्ष्य की अवधारणा का विस्तार हो चुका है और इसमें निम्नलिखित भी सम्मिलित है:–

–इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य

–डिजिटल अभिलेख

–सीसीटीवी फुटेज

–ऑडियो एवं वीडियो रिकॉर्डिंग

–ईमेल एसएमएस व्हाट्सएप चौट

–कंप्यूटर एवं मोबाइल डाटा

आधुनिक दृष्टिकोण के अनुसार साक्ष्य का उद्देश्य न्यायालय को सत्य तक पहुंचने में सहायता प्रदान करना है इसलिए साक्ष्य की अवधारणा को तकनीकी विकास के अनुरूप विस्तृत किया गया है भारतीय साक्ष्य अधिनियम 2023 में साक्ष्य की परिभाषा में इलेक्ट्रॉनिक एवं डिजिटल रिकॉर्ड को स्पष्ट रूप में शामिल कर आधुनिक दृष्टिकोण को विधिक मान्यता प्रदान की गई है।

धारा 61 BSA इलेक्ट्रॉनिक या डिजिटल अभिलेख

धारा 62 BSA इलेक्ट्रॉनिक अभिलेख से संबंधित साक्ष्य के बारे में विशेष उपबंध

धारा 63 BSA इलेक्ट्रॉनिक अभिलेख की ग्राहाता

धारा 63 (4) (C) भाग (क) पक्ष कर द्वारा भरा जाना

भाग (ख) – विशेषज्ञ द्वारा भरा जाना

महत्वपूर्ण निर्णय पुणे बार एसोसिएशन बनाम भारत संघ 22.05.2026 में माननीय SC ने धारा 63 (4) (C) की संवैधानिक वैधता को बकरार रखा है कोर्ट ने इलेक्ट्रॉनिक सबूत के लिए हेश वैल्यू और विशेषज्ञ प्रमाण को अनिवार्य करने वाले कड़े नियमों को सही ठहराया है।

–साक्ष्य की Admissibility और reliability के संबंध में किसी दस्तावेज का साक्ष्य के रूप में स्वीकार होना एक अलग प्रश्न है, जबकि उस पर कितना विश्वास किया जाए यह अलग प्रश्न है

पहला चरण– स्वीकार्यता– क्या साक्ष्य कानून के अनुसार स्वीकार्य है।
दूसरा चरण– क्या साक्ष्य विश्वसनीय और भरोसेमंद है।
तीसरा चरण– उसे साक्ष्य को कितना महत्व दिया जाना चाहिए, कोई साख से ग्राहत हो सकता है, परंतु विश्वसनीय न हो दोषसिद्धि के लिए दोनों पहलुओं की जांच आवश्यक है।
नारायण यादव बनाम छत्तीसगढ़ राज्य आपराधिक अपील संख्या 3343/2025 जजमेंट 5 अगस्त 2025
इकबालिया बयान पर अर्थात संस्वीकृति बयान पर आधारित प्रथम सूचना रिपोर्ट संख्या साक्ष्य में स्वीकार्य नहीं है।
चंद्रभान सुदामा सनम बनाम महाराष्ट्र राज्य आपराधिक अपील संख्या 879 वर्ष 2019 जजमेंट 28 जनवरी 2025
इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड को साक्ष्य के रूप में स्वीकार करने के लिए धारा 65 बी (4) (अब BSA के समक्ष प्रावधान) का प्रमाण पत्र आवश्यक है। बिना प्रमाण पत्र के इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य सामान्यतः है ग्राहय नहीं होगा।
साहिल बनाम एनसीटी दिल्ली 2025 INSC 858 SC कॉल डिटेल रिकॉर्ड (सीडीआर) यदि 65 बी प्रमाण पत्र के बिना हो तो ग्राह्त नहीं है न्यायालय ने कहां केवल अनुमान और प्रमाणित इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्ध नहीं की जा सकती।
सदाभिव धुण्डीराम पाटिल बनाम महाराष्ट्र राज्य 9 जनवरी 2025 SC INSC 93 Extra Judicial Confession पर अत्यधिक सावधानी से भरोसा किया जाना चाहिए। यदि साक्ष्य संदेहास्पद पर कमजोर या अपुष्ट हो तो उस पर दोषसिद्धि आधारित नहीं की जा सकती, अभियोजन को पहले मूलभूत तथ्य सिद्ध करने होंगे।
A. Chain of Custody, Certification, Contradiction handling
चेन ऑफ कस्टडी क्या है
चेन ऑफ कस्टडी का अर्थ है कि किसी भौतिक या इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य के बरामद होने से लेकर न्यायालय में प्रस्तुत होने तक उसकी जब्ती, सिलिंग, संरक्षण, परिवहन, परीक्षण और प्रस्तुतीकरण की पूरी श्रृंखला का रिकॉर्ड रखा जाए, ताकि यह सिद्ध हो सके कि साक्ष्य के साथ कोई छेड़छाड़ नहीं हुई है।
उदाहरण के रूप में
–पुलिस ने मोबाइल फोन जप्त किया
–जप्ती का मेमो बनाया
–सील लगाई गई
–मालखाने में जमा किया
–एफएसएल भेजा व समस्त लिंक साक्ष्य
–एफएसएल से रिपोर्ट प्राप्त
–न्यायालय में प्रस्तुत किया
इन सभी चरणों का रिकॉर्ड ही Chain of Custody कहलाता है।

<u>–चेन ऑफ कस्टडी सर्टिफिकेशन</u>
सर्टिफिकेशन का अर्थ है कि संबंधित अधिकारी यह प्रमाणित करें कि:–
–साक्ष्य उसी स्थिति में प्राप्त हुआ था
–उसे सुरक्षित रखा गया
–किसी प्रकार की छेड़छाड़ नहीं हुई
–परीक्षण हेतु विधिवत भेजा गया
विशेष रूप से इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य में यह अत्यंत महत्वपूर्ण है।
B. Contradiction- विरोधाभास

जब गवाह न्यायालय में कुछ और कहे तथा उसका पूर्व कथन (पुलिस कथन) कुछ और हो, तो उसे Contradiction कहते हैं

धारा 148 BSA - पूर्व कथन द्वारा जिरह

गवाह की विश्वसनीयता की जांच

उसके कथन से असंगति सिद्ध करना

C. Handling of Evidance - साक्ष्य का प्रबंध

Handling का अर्थ है

–साक्ष्य की जब्ती

–पैंकिंग

–सीलिंग

–लेवलिंग

–सुरक्षित भण्डारण

–परिवहन

–परीक्षण

–न्यायालय में प्रस्तुतीकरण

ताकि साक्ष्य की पहचान बनी रहे, सिल सुरक्षित रहे, रिकॉर्ड लगातार बना रहे, अनाधिकृत व्यक्ति की पहुंच न हो

D. Chain of Custody टूटने का प्रभावः– टूटने पर न्यायालय साक्ष्य की विश्वसनीयता पर संदेह कर सकता है।

फॉरेंसिक एवं इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य के मामलों में अभियोजन को यह दिखाना आवश्यक है, की जब्ती से लेकर परीक्षण तक साक्ष्य की अखंडता सुरक्षित रही। यदि Chain of Custody में गंभीर कमी हो तो साक्ष्य का वजन कम हो सकता है।

आधुनिक आपराधिक न्याय प्रणाली में विशेषकर डीएनए, नारकोटिक, मोबाइल डेटा, सीसीटीवी, हार्ड डिस्क, ईमेल तथा डिजिटल साक्ष्य के मामलों में Chain of Custody को साक्ष्य की विश्वसनीयता का अत्यंत महत्वपूर्ण आधार माना है।

E. Contradiction Handling- का अर्थ है–

किसी गवाह या अन्य व्यक्ति के कथन के वर्तमान कथन और उसके पूर्व कथन के विरोधाभास होने पर न्यायालय द्वारा उस विरोधाभास का परीक्षण और मूल्यांकन करना।

(अ) विरोधाभास सिद्ध करने का मूल प्रावधान–

धारा 148 BSA धारा 145 साक्ष्य अधिनियम–यदि किसी गवाह के पूर्व लिखित कथन से उसे विरोधाभाषित करना हो, तो उस कथन के उस विशेष भाग की और उसका ध्यान आकर्षित करना आवश्यक है, जिसका उपयोग विरोधाभास के लिए किया जाना है।

(ब) पुलिस कथनों से विरोधाभासः–

धारा 180 BNSS (धारा 161 सीआरपीसी) के तहत पुलिस द्वारा दर्ज कथन सामान्यतः साक्ष्य नहीं होते लेकिन

धारा 181 BNSS (धारा 162 सीआरपीसी) के अनुसार उनका उपयोग गवाह को विरोधाभाषित करने के लिए किया जा सकता है अर्थात पुलिस बयान का उपयोग सीधे साक्ष्य के रूप में नहीं, बल्कि Contradiction के लिए किया जा सकता है।

गवाह की विश्वसनीयता पर प्रभाव

धारा 152 एवं 153 BSA (धारा 155 एवं 146 साक्ष्य अधिनियम) इन प्रावधानों के अंतर्गत गवाह की साख पर प्रश्न उठायें जा सकते हैं तथा उसके पूर्व असंगत कथनों द्वारा उनकी विश्वसनीयता पर प्रहार किया जा सकता है।

(स) न्यायिक सिद्धांतः– माननीय उच्चतम न्यायालय ने बार–बार कहा है कि हर विरोधाभास महत्वपूर्ण नहीं होता, केवल Material Contradiction ही अभियोजन या बचाव के मामलों को प्रभावित करता हैं।

मामूली विसंगतियां स्वाभाविक मानी जाती हैं।

विरोधाभास तभी सिद्ध माना जाएगा जब धारा 148 BSA (धारा 145 साक्ष्य अधिनियम) की प्रक्रिया का पालन किया गया हो

महत्वपूर्ण निर्णय

1. तहसीलदार सिंह V/S स्टेट ऑफ और UP AIR 1959 SC 1012
2. स्टेट आफ राजस्थान V/S काशीराम– मामूली और मौखिक विरोधाभास में अंतर स्पष्ट किया गया है
3. लीलाराम V/S स्टेट ऑफ हरियाणा– सामान्य मानवीय त्रुटियों और वास्तविक Contradiction में अंतर बताया गया है SCC 1999 (9) 525

New Criminal Laws पर Judicial Trends-

इससे तात्पर्य यह है कि न्यायालय समय के साथ कानून की व्याख्या किस दिशा में कर रहे है, वर्तमान भारतीय न्यायशास्त्र में निम्न प्रवृत्तियां दिखाई देती है–

(A) तकनिकीता की अपेक्षा न्याय पर बल–

न्यायालय अब केवल तकनीकी त्रुटियों के आधार पर अभियोजन को विफल नहीं करते, बल्कि यह देखते हैं कि क्या वास्तविक न्याय हुआ है।

(B) साक्ष्य की गुणवत्ता पर बल, संख्या पर नहीं–

साक्ष्य अधिनियम 2023 के अनुसार एक विश्वसनीय साक्षी प्रर्याप्त हो सकता है।

(C) इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य की बढ़ती स्वीकार्यता–

मेबाइल, सीसीटीवी, कॉल डिटेल रिकॉर्ड, व्हाट्सएप चैट, डिजिटल रिकॉर्ड आदि को महत्वपूर्ण साक्ष्य माना जा सकता है। बशर्ते उनकी प्रामाणिकता सिद्ध हो।

(D) व्यक्तिगत स्वतंत्रता को प्राथमिकता–

गिरफ्तारी को सामान्य नियम और जमानत को अपवाद मानने की पुरानी प्रवृत्ति बदल रही है।

(E) त्वरित न्याय पर जोर–

अनुच्छेद 21 के अंतर्गत शीघ्र सुनवाई को मौलिक अधिकार माना है– अनावश्यक स्थगन पर न्यायालय अधिक कठोर दृष्टिकोण अपना रहे है।

(F) पीड़ित केंद्रित न्याय–

पहले प्रणाली मुख्यतः आरोपी और राज्य के बीच मानी जाती थी अब पीड़ित के अधिकारों को भी विशेष महत्व दिया जा रहा है।

(G) किशोर न्याय में सुरक्षात्मक दृष्टिकोण–

किशोर अपराधियों के प्रति दंडात्मक नहीं, बल्कि सुधारात्मक दृष्टिकोण अपनाया जा रहा है।

(H) जांच की निष्पक्षता पर न्यायिक नियंत्रण–

न्यायालय अब केवल परिणाम नहीं बल्कि जांच की गुणवत्ता, निष्पक्षता और पारदर्शिता को भी देखते हैं इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड की अखंडता तथा फॉरेंसिक साक्ष्य पर अधिक ध्यान दिया जा रहा है।

1. विरोधाभास का व्यावहारिक मूल्यांकन–

हर विरोधाभास अभियोजन को समाप्त नहीं करता, न्यायालय देखते हैं कि विरोधाभास Material है या Minor केवल महत्वपूर्ण विरोधाभास ही अभियोजन को प्रभावित करते हैं

2. सुधारात्मक दंड सिद्धांत–

दंड का आदेश, केवल प्रतिशोध नहीं बल्कि अपराधी का सुधार भी माना जा सकता है।

Court का emphasis, Prosecedural Fairness + Evidence Quality-

हाल के वर्षो में न्यायालय आपराधिक मामलों में दो बातों पर विशेष बल दे रहें है।

1. Prosecedural Fairness (प्रक्रियात्मक निष्पक्षता)
   इसका अर्थ है कि जांच, गिरफ्तारी, तलाशी, जब्ती, पहचान परेड़ आरोप निर्धारण और ट्रायल की पूरी प्रक्रिया कानुन के अनुसार निष्पक्ष हो।
   न्यायालय बार–बार कह रहे है कि–
   –केवल अपराध की गंभीरता र्प्याप्त नहीं है।
   –अभियुक्त को विधिसम्मत प्रक्रिया मिलनी चाहिए।
   –गिरफ्तारी मनमानी नहीं हो सकती।
   –अभियुक्त को सुनवाई का अवसर दिया जाना चाहिए।
   –जांच निष्पक्ष, स्वतंत्र और पूर्वाग्रह–मुक्त होनी चाहिए।
   संवेधानिक आधार–
   अनुच्छेद 14– समानता का अधिकार
   अनुच्छेद 21– विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार जीवन और स्वतंत्रता का अधिकार।
2. Evidence Quality–(साक्ष्य की गुणवता)
   न्यायालय अब केवल साक्ष्य की संख्या नहीं बल्कि उसकी गुणवता और विश्वसनीयता पर अधिक ध्यान दे रहे है।
   मुख्य मानदण्ड–
   –साक्ष्य का स्त्रोत विश्वसनीय हो।
   –chain of custody सुरक्षित हो।
   –इलेक्ट्रोनिक साक्ष्य विधिसम्मत रूप से प्रस्तुत हो।
   –गवाह का बयान सुसंगत हो।
   –वैज्ञानिक एंव फोरेसिंक साक्ष्य का उचित समर्थन हो।
   –जांच में महत्वपूर्ण विरोधाभास न हो।
   अर्थात साक्ष्य ऐसा होना चाहिए जिस पर न्यायालय सुरक्षित रूप से भरोसा कर सके।
   निष्कर्ष– आधुनिक भारतीय आपराधिक न्याय प्रणाली में न्यायालयों का मुख्य फोकस केवल कानूनी ओपचारिकताओं का पालन पर्याप्त नहीं माना जाता, न्यायालय यह भी देखते है कि पूरी प्रक्रिया निष्पक्ष रही या नहीं तथा प्रस्तुत साक्ष्य उच्च गुणवता और विश्वनीयता के है या नहीं, यही वर्तमान आपराधिक न्यायशास्त्र की प्रमुख प्रवृति है।

<u>Key takeaways for ID and Prosecutors</u>

Arrest compliance-based approach-इसका अर्थ है कि अन्वेषण अधिकारी और अभियोजक केवल गिरफ्तारी करने पर नहीं, बल्कि गिरफ्तारी से सम्बन्धित सभी वैधानिक और संवैधानिक आवश्यकताओं के पालन पर विशेष ध्यान दे।

A. Investigation officer (IO) के लिए मुख्य बिन्दु

(A) गिरफ्तारी अंतिम विकल्प हो
–केवल इसलिए गिरफ्तारी न करे कि अपराध दर्ज हो गया हो।
–गिरफ्तारी की आवश्यकता के ठोस कारण रिकॉर्ड करे।

(B) कानूनी शर्तो का पालन
–सम्बन्धित प्रावधानों की पालना करें।
–गिरफ्तारी के आधार लिखित रूप में दर्ज हो।

(C) कारणों का दस्तावेजीकरण
–केस डायरी में स्पष्ट लिखे कि गिरफ्तारी क्यों आवश्यक थी।
–यदि गिरफ्तारी नहीं की गई, तो उसके कारण भी दर्ज करे।

(D) अभियुक्त के अधिकारों की रक्षा

–गिरफ्तारी के कारण बताना।
–परिवार/मित्र को सूचना देना।
–वकील से मिलने का अवसर देना।
(E) न्यायिक समीक्षा को ध्यान में रखना
–प्रत्येक गिरफ्तारी न्यायालय में जांची जा सकती है।
–इसलिए रिकॉर्ड, नोटिस, मेमो और अन्य दस्तावेज पूर्ण रखे।

B. Prosecutor (अभियोजक) के लिए मुख्य बिन्दुः–

(i) गिरफ्तारी की वैधता की जांच

–न्यायालय में गिरफ्तारी का समर्थन करने से पहले उसकी कानूनी वैधता देखे।

(ii) रिकॉर्ड की समीक्षा–

Arrest memo, केस डायरी, गिरफ्तारी के आधार आदि की जांच करे।

(iii) यांत्रिक समर्थन से बचे

–केवल पुलिस के अनुरोध पर रिमाण्ड न मांगे।

– स्वतंत्र रूप से आवश्यकता का मूल्यांकन करे।

(iv) संवैधानिक अधिकारों का सम्मान–

–अनुच्छेद 21 (व्यक्तिगत स्वतंत्रता) और अनुच्छेद 22 के संरक्षण को ध्यान में रखे।

(v) न्यायसंगत अभियोजन

–अभियोजक का दायित्व केवल दोषसिद्धि नहीं बल्कि निष्पक्ष न्याय सुनिश्चित करना भी है।

अरनेश कुमार बनाम बिहार राज्य– में माननीय उच्चतम न्यायालय ने कहा कि पुलिस अधिकारी को गिरफ्तारी की आवश्यकता का संतोषजनक आधार रिकॉर्ड करना चाहिए और मजिस्ट्रेट को भी उसकी स्वतंत्र जांच करनी चाहिए।

अर्थात आधुनिक न्याय प्रणाली में ध्यान "कितनी गिरफतारियां हुई पर नहीं, बल्कि क्या गिरफ्तारी कानूनी आवश्यकता और प्रक्रिया सम्मत थी पर है और यही वर्तमान न्यायिक प्रवृति है।

स्थगन से बचने की रणनिति

निम्न उपाय महत्वपूर्ण हो सकते है–

1. पूर्व तैयारी
   –गवाहो की उपस्थिति पहले से सुनिश्चित करें।
   –सभी दस्तावेज, केस डायरी, एफएसएल रिपोर्ट, जप्ती मेमो आदि समय पर उपलब्ध रखें।
   –समन/वारण्ट की तामिल समय पर कराए।
2. समयबद्व अनुसंधान
   –अनुसंधान में अनावश्यक विलम्ब न हो।
   –लम्बित वैज्ञानिक रिपोर्टो का नियमित फॉलोअप किया जाए।
   –आरोप–पत्र समय सीमा के भीतर प्रस्तुत किया जाए।

(III) प्रभावी केस मैनेजमेंट
–प्रत्येक तारीख पर कार्रवाही के लिए स्पष्ट योजना हो

–किन गवाहों का परीक्षण होना है, यह पहले तय रहे
–अनावश्यक आवेदन और तकनीकी आपत्तियों से बचा जाए
(IV) गवाह प्रबंधन
–गवन को समय पर सूचना दी जाए
–सरकारी गवाहो और विशेषज्ञ गवाहों की उपलब्धता सुनिश्चित की जाए
–उपस्थित गवाह को बिना कारण वापस न भेजा जाए
(V) न्यायालय के समक्ष विरोध
–यदि विपक्ष बार–बार स्थगन मांग रहा हो तो उसका कारण रिकॉर्ड कराने का अनुरोध करें।
–बार–बार स्थगन से त्वरित विचारण के अधिकार पर प्रतिकूल प्रभाव होने का तर्क रखा जावे।
(VI) डिजिटल एवं प्रशासनिक समन्वय
– ई–सम्मन, वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग और डिजिटल रिकॉर्ड का उपयोग
–लंम्बित रिपोर्टो और आदेशों की नियमित मॉनिटरिंग
माननीय उच्चतम न्यायालय ने कहा है कि अनावश्यक स्थगन न्याय के उद्देश्य को बाधित करता है तथा न्यायालयों को केवल उचित और अपरिहार्य परिस्थितियों में ही स्थगन देना चाहिए, त्वरित विचारण संवीधान के अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत एक महत्वपूर्ण अधिकार है।

Evidence handlling में standardization (मानकीकरण का अर्थ यह है कि साक्ष्य को एक निश्चित, समान और विधिसम्मत प्रक्रिया के अनुसार एकत्रित, संरक्षित, पैक, सील, परिवहन, परीक्षण और न्यायालय में प्रस्तुत किया जाए ताकि उसकी प्रामाणिकता, विश्वसनीयता और स्वीकार्यता बनी रहे।
(I) Collection Standard
– घटनास्थल का वैज्ञानिक निरीक्षण
–साक्ष्य को दूषित होने से बचाना
– प्रत्येक वस्तु का अलग–अलग संग्रहण
– डिजिटल साक्ष्य के लिए फोरेंसिक इमेजिंग और हैश बैल्यू का रिकॉर्ड
(II) Documentation Standard-
– जप्ती मेमो को सही बनाना
–समय, स्थान, बरामदगी की परिरिथतियों का स्पष्ट उल्लेख
– फोटोग्राफी, विडियोग्राफी और स्केच का संधारण
–प्रत्येक कार्यवाही का लिखित रिकॉर्ड
(III) Packaging and sealing standard
–साक्ष्य की प्रकृति के अनुसार पैकिंग
–उचित सील का उपयोग
–सील का नमूना सुरक्षित रखना
–सील टूटने या बदलनेकी संभावना समाप्त करना
(IV) Chain of Custody Standard
– साक्ष्य किस अधिकारी के पास, कब और कितने समय तक रहा, इसका पूरा रिकॉर्ड
–प्रत्येक हस्तांतरण का दस्तावेजीकरण का रिकॉर्ड
(V) Forensic Examination standard
–मान्यता प्राप्त FSL द्वारा परीक्षण
–वैज्ञानिक विधियों का उपयोग
–प्रयोगशाला की sops (standard operating Procedures) का पालन
(vi) Coust Presentation Standard.
– मूल साक्ष्य या विधिसम्मत द्वितियक साक्ष्य प्रस्तुत करना

–साक्ष्य के स्रोत, संरक्षण और परीक्षण की प्रकिया को सिद्व करना

-chain of custody में कोई गैप न होना

माननीय SC ने अनेको मामलो में कहां है कि केवल साक्ष्य का मिलना पर्यात नहीं है, अभियोजन को यह भी दिखाना होता है कि

– साक्ष्य सही तरीके से प्राप्त किया गया

–सुरक्षित रखा गया

–वैज्ञानिक रूप से जाँचा गया

– और उसके साथ छेड़छाड़ नही हुई

डीके वासु बनाम स्टेट ऑफ वेस्ट बंगाल AIR 1997 SC 610

भारत के संविधान में मौलिक अधिकारों को विशेष महत्व दिया गया है अनुच्छेद 21 में कहा गया है कि कानून द्वारा निर्धारित प्रक्रिया के अलावा किसी भी व्यक्ति को उसके जीवन या व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित नहीं किया जाएगा।

अनुच्छेद 22 किसी भी व्यक्ति को गिरफ्तार के कारणों की जानकारी दिए बिना हिरासत में नहीं रखा जाएगा और उसे अपनी पसंद के कानूनी सलाहकार से परामर्श करने और अपना बचाव करने का अधिकार से वंचित नहीं किया जाएगा।

गिरफ्तार और हिरासत में रखे गए व्यक्ति को गिरफ्तारी के 24 घंटे के भीतर निकटतम मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया जाएगा।

किसी अपराध के आरोपी व्यक्ति को अपने विरुद्ध गवाह बनने के लिए बाध्य नहीं किया जाएगा।

गिरफ्तार करने वाले/पूछताछ करने वाले पुलिस अधिकारी को अपने पद नाम सहित स्पष्ट दिखाई देने वाली और साफ पहचान और नाम वाली पटियां पहननी चाहिए

गिरफ्तारी का ज्ञापन तैयार करना वह उसे पर गवाह के हस्ताक्षर होंगे गिरफ्तार व्यक्ति के हस्ताक्षर होने चाहिए।

गिरफ्तार या हिरासत की सूचना परिवार मित्र आदि को दी गई हो गिरफ्तार व्यक्ति को हर 48 घंटे में चिकित्सा जांच की जानी चाहिए।

अर्नेश कुमार बनाम बिहार राज्य 2014 SCC (8) पेज 273

धारा 41 सीआरपीसी की पालना के संबंध में माननीय उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट निर्देश दिए है:–

विहान कुमार बनाम हरियाणा राज्य 7 फरवरी 2025

1. गिरफ्तार व्यक्ति को गिरफ्तारी के आधारों की सूचना देना

गिरफ्तारी के आधारों की जानकारी गिरफ्तार व्यक्ति को इस प्रकार की जानी चाहिए की गिरफ्तारी के आधारों का पर्याप्त ज्ञान उसे प्रभावी ढंग से उस भाषा में दिया जा सके जिसे वह समझता है संचार का तरीका ऐसा होना चाहिए जिसे संवैधानिक सुरक्षा का उद्देश्य प्राप्त हो सके।

यदि गिरफ्तार आरोपी की आवश्यकताओं के अनुपालन न करने का आरोप लगता है तो अनुच्छेद 22 की आवश्यकताओं को साबित करने का भर हमेशा जांच अधिकारी पर होगा।

अनुच्छेद 22 का अनुपालन न करने से अभियुक्त की गिरफ्तारी अमान्य हो जाती है तथा आपराधिक न्यायालय द्वारा पारित आगे के प्रतिरक्षित आदेश भी अमान्य हो जाते हैं परंतु इससे जांच आरोप पत्र और मुकदमे पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।

जब किसी गिरफ्तार व्यक्ति को रिमांड के लिए न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया जाता है तो मजिस्ट्रेट का यह कर्तव्य है कि वह यह सुनिश्चित करें कि अनुच्छेद 22 और अन्य अनिवार्य सुरक्षा उपाय का अनुपालन किया गया है या नहीं

अनुच्छेद 22 के उल्लंघन के सिद्ध होने पर न्यायालय का यह कृर्तव्य हैं कि वह अभियुक्त को तुरंत रिहा करने का आदेश दे यह जमानत देने का आधार होगा भले ही जमानत देने पर वैधानिक प्रतिबंध मौजूद हो।

मिहिर राजेश साह बनाम स्टेट ऑफ महाराष्ट्र 2025 SCC ऑनलाइन SC 2356

गिरफ्तारी के आधारों के बारे में गिरफ्तार व्यक्ति को सूचित करने का संवैधानिक आदेश सभी कानून के तहत सभी अपराधों में अनिवार्य है।

गिरफ्तारी के कारणों को गिरफ्तार व्यक्ति को उसकी समझ में आने वाली भाषा में लिखित रूप में सूचित किया जाना चाहिए।

यदि गिरफ्तार करने वाला अधिकारी/व्यक्ति गिरफ्तारी के समय या उसके तुरंत बाद गिरफ्तारी के आधार लिखित रूप में बताने में असमर्थ हो तो उसे मौखिक रूप से बताया जाए उक्त आधारों को उचित समय के भीतर लिखित रूप में सूचित किया जाना चाहिए और किसी भी स्थिति में मजिस्ट्रेट के समक्ष हिरासत की कार्रवाई के लिए गिरफ्तार व्यक्ति को पेश किए जाने के कम से कम 2 घंटे पहले सूचित किया जाना चाहिए।

उपरोक्त का अनुपालन न करने की स्थिति में गिरफ्तारी और उसके बाद की हिरासत अवैध मानी जाएगी और व्यक्ति को रिहा करने की स्वतंत्रता होगी।

धारा 35 से 62 BNSS व्यक्तियों की गिरफ्तारी से संबंधित है

जिनका उल्लेख तत्समय प्रशिक्षण देते समय किया जाएगा।

H-Gupta

हितेश कुमार गुप्ता
(सहायक निदेशक अभियोजन)
न्याया. एसीजेएम 01, उदयपुर।

एजेण्डा अनुसार प्रशिक्षण नोट

1. Arrest पर नवीन दृष्टिकोण
2. स्थगन पर न्यायालयीन नियंत्रण
3. साक्ष्य की व्याख्या आधुनिक दृष्टिकोण
4. New criminal Laws पर Judicial Trends
5. Key Takeaways for I.O. & Prosecutors

1. Arrest पर नवीन दृष्टिकोण

भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता मे गिरफ्तारी के बाबत निम्न प्रावधान है -

1. BNSS की धारा-35 - पुलिस वारंट के बिना कब गिरफ्तार कर सकेगी

2. BNSS की धारा-35(7) - कोई भी गिरफ्तारी ऐसे अपराध के मामले मे जो तीन वर्ष से कम के कारावास से दंडनीय है और ऐसा व्यक्ति जो गंभीर बीमारी से पीड़ित है या 60 वर्ष से अधिक उम्र का है, ऐसे अधिकारी जो पुलिस उपनिरीक्षक से नीचे की पंक्ति का न हो की पुर्व अनुमति के बिना नही की जाएगी।

3. BNSS की धारा-36 - गिरफ्तारी की प्रक्रिया और गिरफ्तारी करने वाले अधिकारी के कर्तव्य

4. BNSS की धारा-38 - जब किसी व्यक्ति को गिरफ्तार किया जाता है और पुलिस द्वारा पुछताछ की जाती है तब गिरफ्तार व्यक्ति पुछताछ के दौरान अपनी पसंद के अधिवक्ता से मिलने का हकदार होगा किंतु सम्पूर्ण पुछताछ में नहीं

BNSS की धारा 43 - गिरफ्तारी कैसे की जाएगी

· BNSS की धारा 43(3) - पुलिस अधिकारी अपराध की प्रकृति और गम्भीरता को ध्यान मे रखते हुए किसी ऐसे व्यक्ति की गिरफ्तारी करते समय या न्यायालय के समक्ष ऐसे व्यक्ति को पेश करते समय हथकड़ी का प्रयोग कर सकता है जो अभ्यासिक या आदतन अपराधी है या अभिरक्षा से निकल भागा है या जिसने संगठित अपराध, आतंकवादी कृत्य औषध संबंधी अपराध, अस्त्र और शस्त्र पर अवैध कब्जे हत्या, बलात्संग, अम्ल हमला, सिक्को और करेंसी नोट का कूटकरण, मानव दुर्व्यापार, बच्चो के विरुद्ध अपराध या राज्य के विरुद्ध अपराध कारित किया

7. BNSS की धारा-47 गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को गिरफ्तारी के आधारो एवं जमानत के अधिकार की सूचना दिया जाना

8. BNSS की धारा-48 गिरफ्तार करने वाले व्यक्ति की गिरफ्तारी आदि के बारे मे नातेदार या मित्र को जानकारी देना

9. BNSS की धारा-58 गिरफ्तार किए गए व्यक्ति का 24 घंटे से अधिक निरुद्ध नही करना

10 BNSS की धारा -170 संज्ञेय अपराधो का किया जाना रोकने के लिए गिरफ्तारी.

11. BNSS की धारा - 172(1) सभी व्यक्ति इस अध्याय के अधीन उनके किसी कर्तव्यो को पूरा करने मे दिए गए पुलिस अधिकारी के युक्तियुक्त निर्देशो के अनुरूप बाध्य होंगे

धारा- 172(2) कोई पुलिस अधिकारी उपधारा (1) के अधीन उसके द्वारा दिए गए निर्देशो के अनुरूप किसी व्यक्ति को प्रतिरोध

- करने, इकार करने, अवज्ञा करने या अवहेलना करने के लिए निरुद्ध कर सकेगा या हटा सकेगा और या तो ऐसे व्यक्ति को मजिस्ट्रेट के समक्ष ले जाएगा या छोटे मामलो मे उसे यथासंभव शीघ्रता 24 घंण्टे की अवधि के भीतर मुक्त कर सकेगा।

2. स्थगन पर न्यायालयीन नियंत्रण

BNSS की धारा 346 (1) प्रत्येक जांच या विचारण मे कार्यवाहियां सभी हाजिर साक्षियो की परीक्षा हो जाने तक दिन प्रतिदिन जारी रखी जाएंगी जब तक कि ऐसे कारणो से जो लेखबद्ध किये जायेगें न्यायालय उन्हे अगले दिन से परे स्थगित करना आवश्यक न समझे परन्तु यह भी कि जहाँ परिस्थितियां पक्कार के नियंत्रण से बाहर है, न्यायालय द्वारा अन्य पक्कारो के आक्षेपो की सुनवाई के पश्चात् और ऐसे कारणो से जो अभिलेखित किए जाएंगे दो से अनाधिक स्थगन प्रदान किया जा सकेगा।

BNSS की धारा - 258(1) बहस और विधि प्रश्न सुनने के पश्चात् यथाशीघ्र बहस पूर्ण होने की तारीख से तीस दिवस की अवधि के भीतर मामले मे निर्णय देगा जिसे उन कारणो का लेखबद्ध करते हुये पैंतालीस दिन की अवधि तक बढ़ाया जा सकेगा।

3. साक्ष्य की व्यारव्या आधुनिक दृष्टिकोण -

इस संदर्भ मे महत्वपूर्ण न्यायिक निर्णय - Arjun Panditrao khotkar v/s Kailash Kushanro Gorantyal

4. New Criminal Laws पर Judicial Trends + Key Takeways for I.O. & Prosecutors.

1. Landmark Judgments-

(a) Arnesh Kumar v/s State of Bihar (2014) 8 SCC 273

(b) People's Union for Civil Liberties v/s State of Maharashtra (2014) 10 SCC 635

(c) Manik Taneja v/s State of Karnataka (2015) 7 SCC 423

(d) Abhishek Jain v/s State 2024 SCC 9874

(e) Abdul khader v/s State 2024 SCC 3919

(f) CBI v/s Vikas Mishra (2023) 6 SCC 49

समाप्त

Sumay
(डा सुमन राव)
ADP (H.I.S.प)
05/06/26

ARREST UNDER BNSS AND NEW JUDICIAL PROVISIONS RELATING TO ARREST, ADJOURNMENT, INTERPRETATION OF DIGITAL EVIDENCE AND CHAIN OF CUSTODY OF DOCUMENTS

1. CONSTITUTIONAL AND LEGAL PROVISIONS OF ARREST

Article 21 of the Constitution of India provides that
"No person shall be deprived of life and personal liberty except according to a procedure established by law."

Module for arrest under BNSS, 2023 (sections 35 to 62):
An arrest is to be made in accordance with the provisions of BNSS or any other law for the time being in force, providing for arrest. (section 62)

Types of arrest under BNSS, 2023:
1. Arrest without a warrant, section 35,
2. Arrest in non-cognizable offenses, section 35(2) & 39
3. Arrest by private person, section 40
4. arrest by magistrate, section 41

Arrest how made: section 43 BNSS, 2023

- Touch or confine the body of the person to be arrested unless submission by words or action; on resistance may use necessary means to effect arrest.
- Keeping in view the nature and gravity of the offense, may handcuff such a person: Prem Shankar Shukla vs. Delhi Administration, 1980, laid the foundation of anti-handcuffing jurisprudence when the apex court ruled it to be violating Articles 14,19 & 21 of the Constitution.
- Special direction for arresting a woman: No male police officer to touch the person of a woman for making her arrest. No woman is to be arrested after sunset and before sunrise except in exceptional circumstances with prior permission of Judicial Magistrate first class.
- Whether the person to be arrested is infirm or is above 60 years of the age and the offence is punishable for imprisonment of less than three years such person shall not be arrested without the prior permission of an officer not below the rank of DYSP. section 35(7)

Obligations of State and Duties of Arresting Authority:

- Memorandum of arrest in the prescribed form/format. (section 36 BNSS)

- Control rooms at the district and state level for maintaining information of arrested persons, displayed in digital form. section 37.
- The arrested person is entitled to meet the advocate of choice. section (38).
- Search of place entered by person sought to be arrested. section 44
- pursuit of offenders into other jurisdictions. section 45.
- Reasonable restraint to prevent escape, section 46.
- Obligation of the person making arrest to inform about the arrest, etc., to relative or Friend, section 48.
- Search of arrested person and power to seize offensive weapon, if any, section 49& 50.
- Medical care and medical examination of accused/arrested person, sections 51-53 & 56.
- Identification of arrested person if needed, section 54.
- Person arrested to be taken before a magistrate in 24 hrs, section 58.
- Duty to report apprehensions, no discharge except on bonds, bail bond or order of magistrate, and power, on escape to pursue and retake (sections 59, 60, & 61).

Reasons or grounds of arrest: section 47 BNSS, 2023

Every police officer or other person arresting any person without a warrant shall forthwith communicate to him full particulars of the offence for which he is arrested or other grounds for such arrest.

Constitutional validity for communication of grounds of arrest is vested in
Article 21: Protecting Life and Personal Liberty; and
Article 22(1) No person who is arrested shall be detained in custody without being informed, ***AS SOON AS MAY BE,*** of the grounds of such arrest.

The Supreme Court in **Joginder Kumar versus State of UP** and **others , 1994** observed that the existence of any power to arrest and the justification to use such power are two different aspects. The person making arrest must be able to justify the arrest with reasons apart from his power to do so.

In **Suhas Chamka versus Union of India and others**, **2024**
the court observed that the Guidelines on *Early Access to Justice at the Pre-arrest, Arrest, and Remand stage* as framed by the National Legal Services Authority are to be pursued diligently.

ManuBhai Ratilal Patel versus State of Gujarat and the others, 2013

it was held that it's obligatory on the part of the magistrate to satisfy himself whether the material placed before him justify remand.

Pankaj Bansal V. Union of India and others (2024),
The Supreme Court has clearly held that the mode of conveying the grounds of arrest must necessarily be meaningful so as to serve the intended purpose, and therefore, it must be furnished to the arrestee in writing as a matter of course.

Prabir Purkayastha v. State, NCTof Delhi, 2024
It was said that any breach of the constitutional safeguards provided under Articles 20, 21, and 22 would vitiate the lawfulness of arrest and subsequent remand and entitle the arrested person to be set at liberty. An infringement of these constitutional protections commands rigorous judicial scrutiny and strict enforcement.

Vihaan Kumar v. state of Haryana and another, 2025
The court held that a failure to comply with the requirement of informing the grounds of arrest soon after the arrest would render the arrest illegal. The Court further observed that although the ideal mode of communication of the grounds of arrest is to provide such grounds in writing, there is no such statutory requirement to provide such grounds in writing. The code noted that it may not be practical to communicate grounds of arrest in writing in every situation, but if such a course is followed, the controversy of non-compliance will not arise at all.

Mihir Rajesh Shah versus State of Maharashtra, November 6 2025, the Supreme Court of India held that

- The constitutional mandate of informing the arrestee the grounds of arrest is mandatory in all offences under all statutes including offences under BNS, 2023.
- The grounds for arrest must be communicated in writing to the arreste in the language he/she understands.
- in cases where the arresting officer is unable to communicate the grounds of arrest in writing on or soon after the arrest, it be so done orally. The said grounds be communicated in writing within a reasonable time, and in any case at least two hours prior to the production of the arrestee for remand proceedings before the magistrate.
- In the case of non-compliance of the above, the arrest and the subsequent remand would be rendered illegal, and the person will be at liberty to be set free.

Drawing from Harikrishna v. State of Maharashtra and Lallubhai Jogi Bhai Patel v. Union of India, the court held that written grounds must be furnished in

the language understood by the person, not merely read out or translated or uttered orally.

Supreme Court guidelines for controlling and restraining arbitrary and unnecessary arrests:

In *Joginder Kumar v. State of UP 1994,* the Supreme Court issued a plethora of arrest guidelines that are required to be followed by the arresting officers. That is justification for arrest, avoidance of unnecessary arrest, the right to inform relatives, police duty to notify arrest to relative or friend and mandatory record-keeping.
D K Basu v. State of West Bengal, 1997, the court directives were implemented by adding sections 41A, 41B, 41C, and 41D in the Criminal Procedure Code, 1973.

Arnesh Kumar versus State of Bihar 2014 is a landmark ruling that imposes checks and balances on the power of the police before an arrest could be made. The key guidelines established were that:

- Notice of appearance under section 41A of the Cr.P.C. be given in the offences punishable with imprisonment for less than seven years.
- The notice of appearance in terms of section 41A of the Criminal Procedure Code, 1973, should be served on the accused within two weeks from the date of institution of the case, which may be extended by the superintendent of the police for the reasons to be recorded in writing.
- Condition for arrest imposed: In such category of offenses, investigating officers must record their reasons in writing, both for making an arrest and for not making an arrest.
- The magistrate must scrutnize the police report and ensure that the rules were followed. Non-compliance of the directives may result in disciplinary action.

Satyendra Kumar Antil v. CBI, decided on January 6, 2026

The judgment aimed to protect individuals from arbitrary arrests and uphold the principle of natural justice.
The Supreme Court gave the following guidelines:

1. Categorization of Offenses: Offenses are categorized into four groups (A, B, C, and D) to streamline the bail process.
2. Section 41 of CrPC: The court clarified the interpretation of Section 41 of the Criminal Procedure Code, emphasizing that arrests should be made only when absolutely necessary.

3. Section 41A of CrPC: The court highlighted the importance of Section 41A, which mandates that the police must issue a notice to the person before making an arrest, giving them an opportunity to appear and cooperate with the investigation.
4. The court provided guidelines on the maximum period for which an accused can be detained without bail.
5. The court emphasized that the power to take a bond for appearance should be exercised judiciously.
6. The court clarified the procedure for filing a chargesheet and the circumstances under which an arrest is necessary.
7. The court provided guidelines on the issuance of summons and the conditions under which a non-bailable warrant can be issued.
8. The court emphasized the need for proper documentation and adherence to procedural requirements while filing a chargesheet.
9. The court provided guidelines on the procedure for default bail, where bail is granted if the police fail to complete the investigation within the stipulated time.
10. The court emphasized that the exercise of judicial discretion should be based on the facts and circumstances of each case.
11. The court provided guidelines on the release of undertrial prisoners who have undergone the maximum period of detention without trial.
12. The court provided guidelines on the grant of bail in non-bailable offenses.
13. The court emphasized the importance of bail in bailable offenses and the need to ensure that bail is granted promptly.
14. The court provided guidelines on the conditions under which bail can be granted or denied.

These guidelines aim to ensure that the bail process is fair, transparent, and in line with the principles of natural justice.

Based on recent judgments, *notice of appearance shall prevail over instant arrest.*

Liability of IO for recording of reasons for arrest

Statutory and Constitutional Obligations:

The Two-Hour Rule:

The Supreme Court mandates that grounds of arrest must be communicated in writing (in a language the accused understands). followed by the written grounds within a reasonable time—and at least two hours before the accused is produced before a Magistrate.

Mandatory Recording:
Section 47 of the Bharatiya Nagarik Suraksha Sanhita, 2023 (BNSS) (analogous to Section 50 of the old CrPC) legally requires an IO to forthwith communicate full particulars of the offense or grounds for arrest.

Personalized Grounds:
The grounds must be specific to the accused's alleged conduct, not just a generic template or the FIR number.

Reasons for Non-Arrest:
For offenses punishable by imprisonment up to 7 years, if the IO decides not to arrest after the accused answers a notice of appearance, the IO must record the specific reasons for this decision in writing.

The liability for procedural lapses operates on multiple levels:

Invalidation of Remand: If an arrested person claims that the written grounds were not supplied and the IO fails to provide a contemporaneous written record proving otherwise, the courts view the arrest and subsequent custodial remand as illegal, entitling the accused to immediate release.

Departmental Action: Violating arrest procedures mandated by the Supreme Court (e.g., D.K. Basu vs. State of West Bengal) and BNSS guidelines invites disciplinary action. The IO can be penalized for misconduct, negligence, or abuse of power.

Wrongful Confinement: If an IO intentionally circumvents recording procedures or detains an individual without genuine, bona fide reasons, the arrested individual can sue for damages in a civil court and initiate criminal proceedings for wrongful confinement.

Human Rights Violations: Cases of deliberate arrest procedure manipulation can be brought before the National Human Rights Commission (NHRC), which has the power to recommend departmental action and compensation against errant police officers.

Role of the Magistrate: To ensure IO accountability, the judicial magistrate must review arrest procedures during the initial production and remand hearings. The Magistrate must verify that the IO recorded the arrest formally, informed the accused of the grounds, and notified a nominated person. The burden of proof to show that the constitutional requirements were met rests entirely on the IO.

2. ADJOURNMENTS IN CRIMINAL TRIALS

Dungar Singh versus state of Rajasthan, 2017:
The court said that the presiding officers of the trial courts conducting the criminal trials will be mindful of not giving much adjournments after the commencement of the evidence in serious criminal cases.
The trial court must carry out the mandate of section 309 of the CRPC, now section 346 of the BNSS 2023 as reiterated in the Sambhunath, Mohammed Khalid and Vinod Kumar case.

Vinod Kumar versus state of Punjab reported in 2015, the court expressed concern by saying that "adjournments are sought on the drop of a hat by the council, even though the witness is present in the court, contrary to all principles of holding a trial that apart, after the examination and chief of a witness is over, an adjournment is sought for cross-examination, and the disquieting feature is that the trial courts grant time. The law requires a special reasons to be recorded for grant of time, but the same is not taken note of as has been noticed earlier in the state.
The Supreme Court in ***CBI v. Meer Usman @ Meer Usman Ali*** judgment delivered on September 22, 2025, directed all the high courts to issue a circular with directions to keep check over adjournments.

- The proceedings in every inquiry or trial shall be held expeditiously. When the stages of examination of a witness starts, such examination shall be continued from day to day until all the witnesses in attendance have been examined, except for the special reasons to be recorded in writing.
- When the witnesses are in attendance before the court, no adjournment or postponement shall be granted without examining them except for the special reasons to be recorded in writing.
- The court should not grant adjournment to suit the convenience of the advocate, except on very exceptional grounds like bereavement in the family and similar. Exceptional reasons duly supported by memo.
- The inconvenience of an advocate is not a special reason for the purpose
- In case of non-cooperation of the accused or his counsel, it shall be kept in mind that the court shall satisfy itself Whether the non-cooperation is in active collision with the delay of the trial, if it is so satisfied for the reasons to be recorded in writing it may if the accused is on bail,issue notice to show cause.
- The court may appoint an amicus curiae for the accused and fix a date for proceeding with cross-examination or trial.
- In cases when the accused is absent and the witness is present for examination, the court can cancel the bail of the accused unless an

application is made on his behalf, seeking permission for his counsel to proceed with the examination of the witness.
- The presiding officer of every court may evolve the system for framing a schedule of constructive working days for the examination of witnesses in each case well in advance after ascertaining the convenience of the council on both sides.
- The summons or the process could be handed over to the public prosecutor in charge of the case to cause them to be served on the witnesses as per the schedule fixed by the court.

Duty of Prosecution:
Comply with the speedy trial principles.
Ensure evidence is ready and witnesses summoned are duly prepared for examination.
Limit adjournment requests.

Duty of defence lawyer:
To protect the client's rights while being ethical.
Avoid convenience adjustments.
Alternative arrangements on unavoidable conflict or emergency.

3. LATEST TRENDS IN INTERPRETATION OF EVIDENCE

The modern approach to the interpretation of evidence shifts away from strict, isolated fact-checking toward a holistic, context-driven framework.
It relies heavily on interdisciplinary integration, evaluating both statistical probabilities and narrative coherence to determine the ultimate reliability of the information. This contemporary methodology is characterized by several specific frameworks:

Explanation-Based Approaches:
Modern interpretations use Inference to the Best Explanation (IBE). Evidence is woven into competing, comprehensive stories, and the narrative that best accounts for all the known facts with the fewest contradictions is deemed the most valid.
Bayesian and Probabilistic Reasoning:
Courts and analysts increasingly apply mathematical logic and probability (e.g., Bayes' Theorem) to quantify how new pieces of evidence alter the likelihood of a hypothesis or claim.
Emphasis on Scientific Validity:
Modern analysis leans heavily on rigorous scientific peer review. The evaluation of forensic data (like digital or DNA evidence) now heavily

scrutinizes the margin of error, false-positive rates, and chain-of-custody protocols.

Contextual & Purposeful Interpretation:

Whether dealing with scientific data or statutory texts, the modern approach requires reading the information within its entire, broader context rather than assessing words or objects at face value. It evaluates the purpose and the surrounding environment of the evidence.

AI & Advanced Forensics Integration:

The interpretation of digital evidence now requires adapting to AI-synthesized content. Modern approaches use both active and passive algorithms to detect manipulations and verify the authenticity of physical and digital records.

Understanding the key differences between digital and electronic records is fundamental to effective records management.

Digital Records Examples:

Scanned Documents
Photographs
Digital Audio and Video Files
Ebooks and PDFs
Digital Artwork

Electronic Records Examples:

Emails and Attachments
Databases
Spreadsheets
Software Applications
Web Pages and Blogs

A digital record is a document that originated in digital format. It’s often a digital analog of a physical record, such as a PDF of an application form, legal document, or invoice.

The Core Admissibility Framework (BSA & IEA):

Electronic records are treated as primary evidence if the original device (e.g., the original server or hard drive) is produced in court.

If a secondary copy is presented (e.g., a printout, a downloaded PDF, or a CD), it is admissible as a "computer output" under Section 63 of the Bharatiya Sakshya Adhiniyam, 2023 (which replaces Section 65B of the Indian Evidence Act).

The Mandatory Certificate (Section 63(4) BSA):
The record must be supported by a certificate identifying the electronic record and describing the manner in which it was produced.

Key Landmark Judgments:
Additional Director General Adjudication, Directorate of Revenue Intelligence v. Suresh Kumar and Co. (2025),
the Supreme Court clarified that while the certification requirement is mandatory, it does not require a rigidly structured, straitjacket format. If the essential requirements of authenticity are met through signed proceedings or official statements, the evidence can be relied upon.

Defects Are Curable:
Kum Shubha @ Shubhashankar v. State of Karnataka (2025),
The Supreme Court ruled that a certificate not issued in the exact prescribed form is not automatically invalid, particularly if the authenticity or integrity of the documents is not genuinely disputed by the opposing party.
The Foundational Ruling:
Arjun Panditrao Khotkar v. Kailash Kushanrao Gorantyal (2020), the Supreme Court conclusively ruled that the certificate is a mandatory "condition precedent" for the admissibility of secondary digital evidence.
If a party is unable to secure the certificate from a third party (like a telecom company), they can seek the court's assistance to compel its production.

Proving Reliability:
Because digital evidence (such as leaked WhatsApp chats or call detail records) is intangible and susceptible to tampering, courts apply strict scrutiny.

No Oral Substitution: The Supreme Court has repeatedly held that the Evidence Act does not permit the proof of an electronic record via pure oral testimony. It must be backed by technical or documentary verification.

Expert Opinion: In complex scenarios, the testimony of an Examiner of Electronic Evidence (under Section 84 of the BSA) may be utilized to establish the integrity, hashing, and origin of the digital artifact.

Chain of Custody and Handling of Evidence:

Key Phases of Evidence Standardization:-
Collection:

Evidence is photographed, documented, and collected using appropriate personal protective equipment (PPE) and sterilized, tamper-evident containers to avoid contamination.

Labeling and Documentation:

Each item receives a unique identifier. Investigators record the case number, exact date, time, location, and the name of the collecting officer.

Chain of Custody:

A rigorous tracking log follows every person who handles the evidence from the moment it is collected to its presentation in court or lab analysis, minimizing the number of handlers.

Storing:

Evidence is stored in environmentally controlled, restricted-access facilities tailored to the material (e.g., refrigeration for biological samples or anti-static shielding for digital devices).

4. JUDICIAL TRENDS ON NEW CRIMINAL LAWS

Modernizing Evidence Standards:-

Electronic & Forensic Evidence: The Supreme Court mandates that electronic records meet strict admissibility tests (e.g., proper certification).
Forensic reports alone are rarely sufficient; judges require them to be corroborated by independent evidence to establish the guilt of the accused.
Circumstantial Evidence: Courts strictly apply the doctrine of an "unbroken chain." The prosecution must establish facts so conclusively that they point only to the guilt of the accused, ruling out any other reasonable hypothesis.

Reinforcing Procedural Fairness

Protecting the Accused: Police must explicitly put all material circumstances and evidence to the accused during trials. Skipping mandatory procedural safeguards (such as those for recording statements) can vitiate the proceedings and result in a failure of justice.
Speedy Trials & Arrest Safeguards: The judiciary focuses on eliminating pre-trial delays, ensuring the timely provision of police records to the accused, and defining limits on police custody to prevent the arbitrary curtailment of civil liberties.
Right to Life and Liberty: Across all proceedings, courts emphasize the "hovering omnipresence of Article 21," mandating that the new timelines for trials and investigations under the BNSS must not compromise the fundamental rights to a fair trial and personal liberty.

Digital and Scientific Evidence:

Expanded Admissibility:

The BSA has modernized the law of evidence, explicitly expanding the ambit of primary and secondary electronic evidence. Judges are trending toward stricter compliance with Section 63/65 of BSA (analogous to the old 65B), particularly requiring mandatory electronic integrity certificates for digital records.

Mandatory Forensics:

Courts are enforcing the new BNSS mandate requiring on-site forensic investigations for all crimes carrying a punishment of 7 years or more.

Expanding Victim-Centric Rights:

Zero FIR Validity: The judiciary is strongly upholding the BNSS provision for "Zero FIR," which allows citizens to file complaints at any police station regardless of jurisdiction. Courts treat this as a vital step in ensuring swift access to justice.

Victim compensation scheme:

widening the definition of “victim" under section 2(y) BNSS, provision for deadline for conducting investigation and trials.

By:
Anju Khiriya
Prosecution Officer
9462494921

PROSECUTION OFFICERS TRAINING PROGRAMME (2026)

RAMESH KUMAR CHOUDHARY
ADP (RPA)

(1) Arrest

(2) Adjournment (BNSS 346/ CrPC 309)

(3) Evidence Interpretation

(4) NCL - Judicial Trends

(1) Arrest

गिरफ्तारी क्या है? –

भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023

गिरफ्तारी कैसे की जाएगी? –

सामान्य गिरफ्तारी – धारा 43, BNSS, 2023

महिला की गिरफ्तारी – धारा 43, BNSS, 2023

गिरफ्तारी कब से मानी जाएगी –

अनुज कुमार सिंह बनाम भारत संघ, पंजाब हरियाणा उच्च न्यायालय, 2026

गिरफ्तारी वास्तविक गिरफ्तारी से ही मानी जाएगी, न कि गिरफ्तारी की फर्द तैयार करने और उसमें डाले गये समय से।

क्या गिरफ्तारी हमेशा आवश्यक है? – धारा 35

(Notice of appearance Vs. Immediate arrest.)

– अरनेश कुमार मामला, एससी, 2014

– सतेन्द्र कुमार अंतिल मामला, एससी, 2022, 2025, 2026

गिरफ्तारी के आधार –

Vihaan Kumar Vs. State of Haryana, SC, 2025

न्यायालय ने कहा कि अनुच्छेद 22(1) के तहत गिरफ्तारी के आधार बताना केवल औपचारिकता नहीं बल्कि संवैधानिक अधिकार है। यदि गिरफ्तारी के कारण नहीं बताए जाते तो गिरफ्तारी अवैध मानी जाएगी। कोर्ट ने यह भी स्पष्ट किया कि केवल फर्द गिरफ्तारी देना पर्याप्त नहीं है।

Mihir Rajesh Shah Vs. State of Maharashtra, SC, 2025

सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि गिरफ्तारी के आधार हर मामले में आरोपी को लिखित रूप में और उसकी समझ की भाषा में बताना अनिवार्य है। कोर्ट ने निर्देश दिया कि यदि तुरंत लिखित आधार देना संभव न हो तो मौखिक रूप से बताए जाएं, लेकिन मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश करने से कम से कम दो घंटे पहले लिखित आधार देना आवश्यक होगा।

Pankaj Bansal Vs. Union of India, SC, 2023

सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि गिरफ्तारी के आधार लिखित रूप में देना सर्वोत्तम प्रक्रिया है ताकि आरोपी प्रभावी ढंग से अपनी कानूनी रक्षा कर सके। यह निर्णय बाद के मामलों में महत्वपूर्ण निर्णय बना।

Kiran Raj Case, SC, 2025

कोर्ट ने कहा कि गिरफ्तारी की फर्द स्वयं को गिरफ्तारी के आधार नहीं माने जा सकते। यदि आरोपी को वास्तविक कारणों की जानकारी नहीं दी गई तो गिरफ्तारी और रिमांड दोनों अवैध हो सकते हैं।

गिरफ्तारी में हथकड़ी का प्रयोग – धारा 43(3), **NEW**

(3) पुलिस अधिकारी, अपराध की प्रकृति और गम्भीरता को ध्यान में रखते हुए, किसी ऐसे व्यक्ति की गिरफ्तारी करते समय या न्यायालय के समक्ष ऐसे व्यक्ति को पेश करते समय हथकड़ी का प्रयोग कर सकता है, जो –

- अभ्यासिक या आदतन अपराधी है या
- अभिरक्षा से निकल भागा है या
- जिसने संगठित अपराध, आतंकवादी कृत्य, औषधी संबंधी अपराध, आयुध और गोलाबारूद पर अवैध कब्जे, हत्या, बलात्संग, अम्ल हमला, सिक्कों और करेंसी नोट का कूटकरण, मानव दुर्व्यापार, बच्चों के विरुद्ध लैंगिक अपराध या
- राज्य के विरुद्ध अपराध कारित किया है।

(2) Adjournment (BNSS 346/ CrPC 309)

- जांच या विचारण की प्रक्रिया दिन–प्रतिदिन जारी रखी जाएगी।
- भारतीय न्याय संहिता, 2023 की धाराओं 64, 65, 66, 67, 68, 70 एवं 71 का विचारण आरोप–पत्र प्रस्तुत करने की तारीख से दो मास में पूरा किया जाएगा।
- बिना उचित कारणों के स्थगन नहीं दिया जाएगा और यदि दिया जाता है तो उसके कारण लेखबद्ध करने होंगे।
- किसी भी मामले में दो से अधिक स्थगन नहीं दिए जाएगें।

संबंधित मामले–

State of Uttar Pradesh Vs. Shambhu Nath Singh, SC, 2001

सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि बार–बार स्थगन देना न्याय प्रक्रिया के दुरुपयोग के समान है। गवाह उपस्थित होने पर अदालत को दिन–प्रतिदिन विचारण चलाना चाहिए।

Vinod Kumar Vs. State of Punjab, SC, 2015

न्यायालय ने अनावश्यक स्थगनों की कड़ी आलोचना करते हुए कहा कि शीघ्र विचारण न्याय के उद्देश्य को विफल करता है।

Asian Resurfacing of Road Agency Pvt. Ltd. Vs. CBI, SC, 2018

सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि स्थगन आदेशों और बार–बार स्थगन के कारण मुकदमों में देरी नहीं होनी चाहिए और विचारण को यथाशीघ्र आगे बढ़ाया जाना चाहिए।

Hussain Vs. Union of India, SC, 2017

कोर्ट ने त्वरित विचारण को अनुच्छेद 21 का हिस्सा बताते हुए निर्देश दिया कि अनावश्यक स्थगन से बचा जाए।

P. Ramachandra Rao Vs. State of Karnataka, SC, 2002

सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि मुकदमों में अत्यधिक देरी न्याय व्यवस्था की विश्वसनीयता को प्रभावित करती है और अदालतों को अनावश्यक स्थगनों को रोकना चाहिए।

(3) Evidence Interpretation

साक्ष्य को संपूर्णता में पढ़ना

किसी बयान, दस्तावेज़ या इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड को टुकड़ों में नहीं बल्कि पूरे संदर्भ में देखा जाता है।

श्रेष्ठ साक्ष्य का नियम

मूल दस्तावेज़/मूल इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड को प्राथमिक महत्व दिया जाता है।
द्वितीयक साक्ष्य तभी स्वीकार होगा जब कानून अनुमति दे।

प्रासंगिकता का सिद्धांत

केवल वही तथ्य स्वीकार किए जाते हैं जिनका विवादित मुद्दे से सीधा या अप्रत्यक्ष संबंध हो।

संदेह का लाभ

आपराधिक मामलों में यदि साक्ष्य से उचित संदेह उत्पन्न हो तो लाभ आरोपी को दिया जाता है।

मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य का सामंजस्य

यदि मौखिक बयान और दस्तावेज़ में विरोध हो तो सामान्यतः दस्तावेजी साक्ष्य को अधिक विश्वसनीय माना जाता है।

इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य की प्रामाणिकता

डिजिटल रिकॉर्ड की सत्यता के लिए hash value, certificate और expert opinion को महत्व दिया जाता है।

गवाह की विश्वसनीयता का परीक्षण

गवाह के आचरण, जिरह, पूर्व कथनों और परिस्थितियों के आधार पर उसकी विश्वसनीयता आंकी जाती है।

स्वीकारोक्ति की व्याख्या

दबाव, धमकी या प्रलोभन से प्राप्त स्वीकारोक्ति सामान्यतः मान्य नहीं होती।

परिस्थितिजन्य साक्ष्य का नियम

परिस्थितियों की श्रृंखला इतनी पूर्ण होनी चाहिए कि आरोपी के दोष के अलावा अन्य संभावना न बचे।

न्यायालय की विवेकाधीन शक्ति

न्यायालय प्रत्येक साक्ष्य का मूल्य, विश्वसनीयता और प्रभाव परिस्थितियों के अनुसार तय करता है।

(4) NCL - Judicial Trends

भारत के नए आपराधिक कानूनों —

Bharatiya Nyaya Sanhita, 2023 (BNS), Bharatiya Nagarik Suraksha Sanhita, 2023 (BNSS) और **Bharatiya Sakshya Adhiniyam, 2023 (BSA)** — को लेकर न्यायपालिका का हालिया रुझान **(Judicial Trend)** तकनीक–आधारित, **victim-centric** तथा **speedy justice** की ओर दिखाई देता है।

Digital Evidence को बढ़ती मान्यता

सुप्रीम कोर्ट ने **Pune Bar Association Vs. Union of India** (2026) में कहा कि **hash value** और **expert certificate electronic evidence** की **authenticity** सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक हैं। न्यायालय ने डिजिटल साक्ष्य की **reliability** पर विशेष जोर दिया।

Personal Liberty की सुरक्षा

Pankaj Bansal Vs. Union of India (2023) तथा बाद के मामलों में सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि **arrest grounds** स्पष्ट रूप से बताना अनिवार्य है। **BNSS** के तहत **procedural safeguards** को **Article 21** से जोड़ा जा रहा है।

Speedy Trial पर जोर

अदालतें बार–बार यह कह रही हैं कि अनावश्यक **adjournment** से बचा जाए और **day-to-day trial** चलाया जाए। **Vinod Kumar Vs. State of Punjab** तथा **Hussain Vs. Union of India esa speedy trial** को मौलिक अधिकार माना गया।

Scientific Investigation का समर्थन

न्यायिक और प्रशासनिक स्तर पर **forensic evidence, CCTV, fingerprint, video-recording** तथा **e-evidence** के उपयोग को बढ़ावा दिया जा रहा है। हरियाणा सहित कई राज्यों में नए कानूनों के तहत **scientific investigation** पर विशेष बल दिया गया।

Victim-Centric Approach

नए कानूनों में महिलाओं, बच्चों और संगठित अपराध से जुड़े मामलों में Courts अधिक संवेदनशील दृष्टिकोण अपना रही हैं। False promise of marriage, mob lynching, terrorism और organized crime जैसे offences पर सख्त रुख दिखाई दे रहा है।

Procedural Compliance को अनिवार्य मानना

न्यायालय यह स्पष्ट कर रहे हैं कि नए criminal laws esa procedural safeguards का पालन अनिवार्य है। Electronic evidence, arrest memo, remand procedure और charge-sheet timelines पर strict scrutiny की जा रही है।

धन्यवाद

Madan Lal Bagaria

Prosecution Officer

ACJM - 09, Amer

धारा 35(3) BNSS के तहत नोटिस

1. **धारा 35(3) BNSS के तहत नोटिस कब जारी करना जरूरी है?**

धारा 35(3) BNSS के तहत नोटिस तब जारी किया जाना चाहिए जब अनुसन्धानकर्ता (I.O.) ने किसी व्यक्ति को गिरफ्तार न करने का निर्णय लिया हो, भले ही वह आरोपी व्यक्ति संज्ञेय अपराध करने का दोषी हो।

2. **क्या उन सभी मामलों में धारा 35(3) BNSS के तहत नोटिस जारी करना अनिवार्य है जहाँ अपराध 7 वर्ष या उससे कम की सजा का है?**

नहीं, यह अनिवार्य नहीं है। धारा 35(3) BNSS के तहत नोटिस केवल तभी जारी कियाजाना चाहिए जब अनुसन्धानकर्ता ने 7 वर्ष तक की सजा वाले अपराध के आरोपी व्यक्ति को अनुसन्धान में शामिल करने और उसे बिना गिरफ्तार किए चालान देने का निर्णय लिया हो।

3. यदि किसी आरोपी को गिरफ्तार करना है या नहीं, यह तय नहीं हुआ है तो उसे पूछताछ के लिए कैसे बुलाया जाए?

BNSS की धारा 179 के तहत पूछताछ के लिए आरोपी व्यक्तियों सहित किसी भी व्यक्ति को नोटिस जारी किया जा सकता है। यदि अनुसन्धानकर्ता यह निष्कर्ष निकालता है कि उसे गिरफ्तार करना आवश्यक नहीं है, तो पूछताछ के बाद BNSS की धारा 35(3) के तहत नोटिस जारी किया जा सकता है।

4. **क्या किसी ऐसे व्यक्ति को, जिसने BNSS की धारा 35(3) के तहत जारी नोटिस की शर्तों का उल्लंघन किया है, बिना किसी न्यायालय की अनुमति के गिरफ्तार किया जा सकता है?**

हाँ। ऐसे मामलों में, अभियुक्त को मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत करते समय, अनुसन्धानकर्ता को सभी कारणों और तथ्यों के साथ विस्तार से बताना होगा कि अभियुक्त ने उसे जारी नोटिस की शर्तों का उल्लंघन कैसे किया। ऐसी परिस्थितियों में, अनुसन्धानकर्ता के लिए यह जाँच करना जरूरी है कि क्या किसी न्यायालय ने अभियुक्त की गिरफ्तारी के संबंध में कोई विशिष्ट निर्देश तो जारी नहीं किया है।

5. क्या किसी ऐसे व्यक्ति को, जिसने BNSS की धारा 35(3) के तहत जारी नोटिस की शर्तों का उल्लंघन नहीं किया है, बिना किसी न्यायालय की अनुमति के गिरफ्तार किया जा सकता है?

सामान्यतः, किसी व्यक्ति को, जिसने नोटिस के किसी भी नियम व शर्त का उल्लंघन नहीं किया है, नोटिस में उल्लिखित अपराधों के लिए अनुसन्धानकर्ता द्वारा गिरफ्तार नहीं किया जा सकता। ऐसी परिस्थितियों में, अनुसन्धानकर्ता तभी गिरफ्तार कर सकता है जब कुछ नए तथ्यों के आधार पर कोई नया अपराध (धारा) जोड़ा गया हो। नए अपराध (जोड़ी गई धारा) के लिए, अर्नेश कुमार मामले में दिए गए निर्णय के सभी दिशा निर्देश लागू होंगे।

6. क्या प्रश्न 4 और 5 में धारा 35(3) BNSS के अंतर्गत जारी नोटिस के संबंध में वर्णित गिरफ्तारी पर प्रतिबंध, धारा 179 BNSS के अंतर्गत नोटिस जारी होने पर भी लागू होते हैं?

नहीं। धारा 179 BNSS के अंतर्गत नोटिस जारी होने पर ऐसे प्रतिबंध लागू नहीं होते।

7. क्या 7 वर्ष या उससे अधिक के कारावास, आजीवन कारावास या मृत्युदण्ड से दण्डनीय अपराध के आरोपी व्यक्ति को धारा 35(3) BNSS के अंतर्गत नोटिस जारी किया जा सकता है?

हाँ। यदि अनुसन्धानकर्ता यह निर्णय लेता है कि ऐसे व्यक्ति की गिरफ्तारी जरूरी नहीं है, तो वह नोटिस जारी कर सकता है, अनुसन्धान में शामिल कर सकता है, तथा उस व्यक्ति के विरुद्ध चालान दाखिल कर सकता है।

8. BNSS की धारा 35(3) के तहत नोटिस कैसे दिया जाएगा?

नोटिस व्यक्तिगत रूप से या Registered Post/Speed Post दिया जाएगा, इलेक्ट्रॉनिक रूप से नहीं।

सतेन्द्र कुमार अन्तिल बनाम CBI व अन्य मामले में अपने 2022 के फैसले में, सर्वोच्च न्यायालय ने राकेश कुमार बनाम विजयंत आर्या (DCP) व अन्य मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय के फैसले को बरकरार रखा था, जिसमें कहा गया था कि व्हाट्सएप या अन्य

इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से दिया गया नोटिस, CrPC की धारा 41-A/35(3) BNSS के तहत तामील का तरीका नहीं माना जाएगा। इसी मामले में, जनवरी, 2025 में, सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि BNSS की धारा 35(3) के तहत नोटिस इलेक्ट्रॉनिक रूप से नहीं दिया जा सकता। जुलाई, 2025 में, सर्वोच्च न्यायालय ने दोहराया कि BNSS की धारा 35(3) के तहत जारी नोटिस इलेक्ट्रॉनिक रूप से नहीं दिया जा सकता। सर्वोच्च न्यायालय ने जनवरी 2025 में जारी अपने पूर्व निर्देश को संशोधित करने के लिए हरियाणा राज्य द्वारा दायर आवेदन को खारिज कर दिया।

9. यदि अपराध 7 वर्ष के कारावास से दण्डनीय है, तो अर्नेश कुमार निर्णय में उल्लिखित समय-सीमाएँ क्या हैं?

यदि अपराध 7 वर्ष या उससे कम के कारावास से दण्डनीय है, तो अर्नेश कुमार निर्णय के अनुसार, 15 दिन (मामले के पंजीकरण की तिथि से) अनुसन्धानकर्ता के लिए अधिकतम समय सीमा है—

(I) यह तय करना कि किसी अपराध के आरोपी व्यक्ति को गिरफ्तार करना जरूरी है या नहीं।

और

(II) यदि गिरफ्तारी जरूरी नहीं है, तो धारा 35(3) के तहत नोटिस जारी करना। यदि व्यक्ति 7 वर्ष या उससे अधिक के कारावास, आजीवन कारावास या मृत्युदण्ड से दण्डनीय अपराध का आरोपी है, तो कोई निश्चित समय-सीमा नहीं है।

<u>गिरफ्तारी (धारा 35 BNSS)</u>

एक अनुसन्धानकर्ता निम्नलिखित परिस्थितियों में किसी व्यक्ति को बिना मजिस्ट्रेट के आदेश और वारंट के गिरफ्तार कर सकता है :-

1. सजा की परवाह किए बिना Section 35(1)(a), (c), (d), (e), (f), (g), (h), (i), (j)-

1. जो पुलिस अधिकारी की उपस्थिति में संज्ञेय अपराध करता है Section 35(1)(a)

(NDPS, Arms Act, Excise Act, Gambling, 332/353 etc.)

2. जो इस संहिता के अधीन या राज्य सरकार के आदेश द्वारा उद्घोषित अपराधी घोषित किया

जा चुका है अथवा Section 35(1)(d)

3. जिसके कब्जे में कोई ऐसी चीज पाई जाती है जिसके चुराई हुई सम्पत्ति होने का उचित रूप से संदेह किया जा सकता है और जिस पर ऐसी चीज के बारे में अपराध करने का उचित रूप से संदेह किया जा सकता है अथवा Section 35(1)(e)

4. जो पुलिस अधिकारी को उस समय बाधा पहुँचाता है जब वह अपना कर्तव्य कर रहा है या जो विधि पूर्ण अभिरक्षा से निकल भागा है या निकल भागने का प्रयत्न करता है अथवा Section 35(1)(f)

5. जिस पर संघ के सशस्त्र बलों में से किसी से अभित्याजक होने का उचित संदेह है अथवा Section 35(1)(g)

6. जो भारत से बाहर किसी स्थान में किसी ऐसे कार्य किए जाने से, जो यदि भारत में किया गया होता, तो अपराध के रूप में दण्डनीय होता और जिसके लिए वह प्रत्यर्पण संबंधी किसी विधि के अधीन या अन्यथा भारत में पकड़े जाने का या अभिरक्षा में निरुद्ध किए जाने का भागी है, संबद्ध रह चुका है या जिसके विरुद्ध इस बारे में उचित परिवाद किया जा चुका है या विश्वसनीय इत्तिला प्राप्त हो चुकी है या उचित संदेह विद्यमान है कि वह ऐसे संबंध रह चुका है अथवा Section 35(1)(h)

7. जो रिहा किया गया आरोपी धारा 356 की उपधारा (5) के अधीन बनाए गए किसी नियम को भंग करता है अथवा Section 35(1)(i)

8. जिसकी गिरफ्तारी के लिए कोई भी माँग, चाहे वह लिखित हो या मौखिक, किसी अन्य पुलिस अधिकारी से प्राप्त हुई हो, बशर्ते कि माँग में गिरफ्तार किए जाने वाले व्यक्ति और उस अपराध या अन्य कारण को निर्दिष्ट किया गया हो जिसके लिए गिरफ्तारी की जानी है और उससे यह प्रतीत होता है कि उस व्यक्ति को माँग जारी करने वाले अधिकारी द्वारा बिना वारंट के कानूनी रूप से गिरफ्तार किया जा सकता है। Section 35(1)(j)

II. कारावास जिसकी अवधि सात वर्ष से अधिक की हो, आजीवन कारावास या मौत की सजा हो

जिसके विरुद्ध विश्वसनीय जानकारी प्राप्त हुई है कि उसने एक संज्ञेय अपराध किया और पुलिस अधिकारी के पास उस आधार पर विश्वास करने का कारण है कि उस व्यक्ति ने उक्त अपराध किया है। Section 35(1)(c) - FIR is registered and there are some reasons to believe (statement of eyewitnesses/victim, 180/183 BNSS statements, Disclosure statement, Recovery, CCTV, Audio recording etc.)

III. किसी अवधि के लिए कारावास जो सात वर्ष से कम हो सकता है या जिसे सात वर्ष तक बढ़ाया जा सकता है, चाहे जुर्माने के साथ या बिना जुर्माने के Section 35(1)(b)

1. जिसके खिलाफ उचित शिकायत की गई है या विश्वसनीय जानकारी प्राप्त हुई है, या उचित संदेह मौजूद है कि उसने कोई संज्ञेय अपराध किया है। Section 35(1)(b) - FIR registration completes this requirement.

और

2. पुलिस अधिकारी के पास ऐसी शिकायत, सूचना या संदेह के आधार पर यह विश्वास करने का कारण है कि उक्त व्यक्ति ने यह अपराध किया है Section 35(1)(b)(i) - there are some reasons to believe (statement of eyewitnesses/victim, 180/183 BNSS statements, Disclosure statement, Recovery, CCTV, Audio recording etc.)

और

3. पुलिस अधिकारी इस बात से संतुष्ट हैं कि ऐसी गिरफ्तारी जरूरी है Section 35 (1)(b)(ii) -

I. ऐसा आरोपी जो आगे फिर से अपराध कर सकता है।

या

II. अभियोग के अनुसंधान में उचित जाँच के लिये।

या

III. ऐसे व्यक्ति को अपराध के सबूतों को गायब करने या सबूतों के साथ किसी प्रकार की छेड़छाड़ करने से रोकने के लिये।

या

IV. ऐसे व्यक्ति को मामले के तथ्यों से परिचित किसी भी व्यक्ति को कोई प्रलोभन, धमकी करने से रोकना ताकि न्यायालय या पुलिस अधिकारी के सामने ऐसे तथ्यों को खुलासा करने से रोका जा सके।

या

V. जब तक ऐसे व्यक्ति को गिरफ्तार नहीं कर लिया जाता न्यायालय में उसकी उपस्थिति, जब भी अपेक्षित हो, सुनिश्चित नहीं की जा सकती।

4. पुलिस अधिकारी ऐसी गिरफ्तारी करते समय अपने कारणों को लिखित रूप में दर्ज करेगा। End of Section 35(1)(b)

5. ऐसे सभी मामलों में जहाँ किसी व्यक्ति की गिरफ्तारी की आवश्यकता नहीं है, एक पुलिस अधिकारी गिरफ्तारी न करने के कारणों को लिखित रूप में दर्ज करेगा। Proviso of Section 35(1)(b)

<u>चेकलिस्ट</u>

1. क्या हर उस मामले में गिरफ्तारी के बाद मजिस्ट्रेट को चेक लिस्ट देना अनिवार्य है जहाँ अपराध 7 साल तक की कैद की सजा का प्रावधान है?

नहीं। चेक लिस्ट केवल तभी अनिवार्य है जब गिरफ्तारी 35(1)(b) BNSS के तहत की गई हो। ऐसे कई उदाहरण हैं जहाँ 7 साल तक की कैद की सजा वाले अपराधों में गिरफ्तारी की जाती है, लेकिन 35(1)(b) BNSS के तहत नहीं। ऐसे मामलों में, अर्नेश कुमार निर्णय के संदर्भ में, मजिस्ट्रेट को चेक लिस्ट देना आवश्यक नहीं है। उदाहरण के लिए 35(1)(a),(c)(d) to (j) BNSS

1. जो पुलिस अधिकारी की उपस्थिति में संज्ञेय अपराध करता है Section 35(1)(a) - (NDPS, Arms Act, Excise Act, Gambling, 332/353 etc.)
2. जो इस संहिता के अधीन या राज्य सरकार के आदेश द्वारा **उद्घोषित अपराधी** घोषित किया जा चुका है अथवा Section 35(1)(d)

3. **जिसके कब्जे** में कोई ऐसी चीज पाई जाती है जिसके चुराई हुई सम्पत्ति होने का उचित रूप से संदेह किया जा सकता है और जिस पर ऐसी चीज के बारे में अपराध करने का उचित रूप से संदेह किया जा सकता है अथवा Section 35(1)(e)

4. जो **पुलिस अधिकारी को उस समय बाधा पहुँचाता है** जब वह अपना कर्तव्य कर रहा है या जो विधि पूर्ण अभिरक्षा से निकल भागा है या निकल भागने का प्रयत्न करता है अथवा Section 35(1)(f)

5. जिस पर संघ के सशस्त्र बलों में से किसी से अभित्याजक होने का उचित संदेह है अथवा Section 35(1)(g)

6. जो भारत से बाहर किसी स्थान में किसी ऐसे कार्य किए जाने से, जो यदि भारत में किया गया होता, तो अपराध के रूप में दण्डनीय होता और जिसके लिए वह प्रत्यर्पण संबंधी किसी विधि के अधीन या अन्यथा भारत में पकड़े जाने का या अभिरक्षा में निरुद्ध किए जाने का भागी है, संबद्ध रह चुका है या जिसके विरुद्ध इस बारे में उचित परिवाद किया जा चुका है या विश्वसनीय इत्तिला प्राप्त हो चुकी है या उचित संदेह विद्यमान है कि वह ऐसे संबंध रह चुका है अथवा Section 35(1)(h)

7. जो रिहा किया गया आरोपी धारा 394 की उपधारा (5) के अधीन बनाए गए किसी नियम को भंग करता है अथवा Section 35(1)(i)

8. जिसकी गिरफ्तारी के लिए कोई भी माँग, चाहे वह लिखित हो या मौखिक, किसी अन्य पुलिस अधिकारी से प्राप्त हुई हो, बशर्ते कि माँग में गिरफ्तार किए जाने वाले व्यक्ति और उस अपराध या अन्य कारण को निर्दिष्ट किया गया हो जिसके लिए

गिरफ्तारी की जानी है और उससे यह प्रतीत होता है कि उस व्यक्ति को माँग जारी करने वाले अधिकारी द्वारा बिना वारंट के कानूनी रूप से गिरफ्तार किया जा सकता है। Section 35(1)(j)

2. Checklist के संबंध में अर्नेश कुमार फैसले में क्या दिशानिर्देश उल्लिखित हैं?

सभी पुलिस अधिकारियों को धारा 35(1)(b)(ii) के तहत निर्दिष्ट उप-खंडों वाली एक Checklist प्रदान की जानी चाहिए,
और
पुलिस अधिकारी आरोपी को आगे की हिरासत के लिए मजिस्ट्रेट के समक्ष अग्रेषित/पेश करते समय विधिवत दायर की गई Checklist को अग्रेषित करेगा
और
वे **कारण और सामग्री** प्रस्तुत करें जिनके कारण गिरफ्तारी आवश्यक हुई:

<u>नोट: तीसरा निर्देश (कारण और सामग्री प्रस्तुत करने के लिए) दूसरे निर्देश (चेक लिस्ट अग्रेषित करना) के अतिरिक्त है। इसलिए, अनुसन्धानकर्ता के लिए चेक लिस्ट में चुने गए विकल्पों को "कारणों और सामग्रियों" के साथ प्रमाणित करना अनिवार्य है।</u>

3. क्या अर्नेश कुमार के फैसले के बाद BNSS, 2023 में धारा 35(1)(b)(ii) के तहत धाराएँ शामिल की गई?

नहीं, ये धाराएँ आपराधिक प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 द्वारा उप-धारा (1) के खंड (a) और (b) में संशोधन करते हुए पेश की गई ताकि पुलिस अधिकारी को गिरफ्तारी की प्रदान की गई शक्तियाँ उचित देखभाल और औचित्य के बाद प्रयोग की जा सके और ऐसी गिरफ्तारी आवश्यक और अपेक्षित हो। "Checklist" शब्द का उल्लेख पहली बार 2014 में अर्नेश कुमार के फैसले में किया गया था, लेकिन Checklist में शामिल किए जाने वाले खंड आपराधिक प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 के बाद से मौजूद थे।

गिरफ्तारी के आधार

1. गिरफ्तार व्यक्ति को गिरफ्तारी के आधार की सूचना देने से संबंधित कानूनी प्रावधान क्या हैं?

भारतीय संविधान का अनुच्छेद 22(1): कोई भी व्यक्ति जिसे गिरफ्तार किया गया हो, उसे हिरासत में लेने से पहले, यथाशीघ्र, उसकी गिरफ्तारी के आधारों की जानकारी दी जानी चाहिए और उसे अपनी पसंद के विधिक अधिवक्ता से परामर्श करने तथा उसका बचाव करने के अधिकार से वंचित नहीं किया जाएगा।

BNSS की धारा 47(1): कोई भी पुलिस अधिकारी या अन्य व्यक्ति जो बिना वारंट के किसी व्यक्ति को गिरफ्तार करता है, उसे तत्काल उस व्यक्ति को गिरफ्तारी के पूरे विवरण या अन्य आधारों की जानकारी देना अनिवार्य है, जिनके कारण उसे गिरफ्तार किया गया है।

2. पुलिस अधिकारी गिरफ्तारी के आधार कैसे बता सकता है?

विहान कुमार बनाम हरियाणा राज्य मामले में सर्वोच्च न्यायालय की टिप्पणी के अनुसार, अनुच्छेद 22(1) की आवश्यकताओं के अनुपालन को साबित करने का भार हमेशा अनुसन्धान अधिकारी / एजेंसी पर होगा। इसलिए, गिरफ्तारी के आधार को गिरफ्तारी मेमो के माध्यम से लिखित रूप में बताना बेहतर है क्योंकि अभियुक्त को गिरफ्तारी मेमो पर हस्ताक्षर करना होता है।

3. यदि गिरफ्तारी के आधार गिरफ्तार व्यक्ति को नहीं बताए गए तो क्या होगा?

विहान कुमार बनाम हरियाणा राज्य मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा है कि यदि गिरफ्तारी के आधार गिरफ्तार व्यक्ति को नहीं बताए जाते, तो गिरफ्तारी को अवैध घोषित किया जाएगा। एक बार यह उल्लंघन सिद्ध हो जाने पर, अदालत का कर्तव्य बनता है कि वह आरोपी को तुरंत रिहा करने का आदेश दे। इसके अलावा, आपराधिक न्यायालय द्वारा पारित रिमांड आदेश भी अमान्य हो जाते हैं। हालांकि, यह स्पष्ट किया गया कि अनुसंधान, आरोप पत्र और मुकदमे पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।

4. "गिरफ्तारी के आधार" में क्या-क्या शामिल होना चाहिए?

(I) जिस अपराध के लिए व्यक्ति को गिरफ्तार किया गया है, उसका पूरा विवरण (BNSS की धारा 47 के अनुसार)

i. भारतीय न्याय संहिता और स्थानीय विशेष कानून की वे धाराएँ जिनके तहत गिरफ्तारी की गई है।

II. व्यक्ति की विशेष भूमिका (सुप्रीम कोर्ट: कालिसेट्टी उपेंद्र रेड्डी बनाम आंध्र प्रदेश राज्य)

III. गिरफ्तारी के सभी बुनियादी तथ्य (सुप्रीम कोर्ट: प्रबीर पुरकायस्थ बनाम दिल्ली एन.सी.टी. राज्य)

(i) मामले के संक्षिप्त तथ्य / वे कारण जिनके आधार पर विश्वास किया गया कि उसने अपराध किया है।

<u>जमानती अपराध</u>

1. जमानती अपराध क्या होते हैं?

BNSS की धारा 2(1)(c) के अनुसार, जमानती अपराध वे अपराध होते हैं जो संहिता की प्रथम अनुसूची में जमानती के रूप में उल्लिखित हैं।

2. BNSS में जमानती अपराधों से संबंधित क्या प्रावधान हैं?

धारा 47(2), BNSS: यदि कोई पुलिस अधिकारी बिना वारंट के किसी व्यक्ति को जमानती अपराध में गिरफ्तार करता है, तो उसे गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को यह सूचित करना अनिवार्य है कि उसे जमानत पर रिहा होने का अधिकार है और वह अपने लिए जमानती (sureties) की व्यवस्था कर सकता है।

धारा 47(2), BNSS: यदि कोई व्यक्ति बिना वारंट के गिरफ्तार या हिरासत में लिया गयाहै और वह किसी भी समय जमानत देने के लिए तैयार हो, तो ऐसे व्यक्ति को जमानत पर रिहा किया जाएगा। यदि अधिकारी को उपयुक्त लगे, और विशेष रूप से तब जब व्यक्ति निर्धन हो अर्थात गिरफ्तारी की तारीख से एक सप्ताह के भीतर जमानत बॉन्ड नहीं दे पा रहा हो और जमानती प्रस्तुत करने में असमर्थ हो, तो ऐसे व्यक्ति को जमानत बॉन्ड की बजाय केवल उपस्थिति के लिए व्यक्तिगत बॉन्ड भरवाकर रिहा किया जाएगा। सर्वोच्च न्यायालय ने भी अपने विभिन्न निर्णयों में कहा है कि यह प्रावधान

अधिकतम 7 वर्ष तक सजा वाले अपराधों में गिरफ्तारी का सारांश [35(1)(b) BNSS]

1. ऐसे मामलों में किसी व्यक्ति की गिरफ्तारी कब की जा सकती है जहाँ अपराध की अधिकतम सजा 7 वर्ष तक है?

i. आरोपी पर पहले से कई मामले दर्ज हों, वह आदतन अपराधी या हिस्ट्रीशीटर हो (उसके विरुद्ध दर्ज मामलों का विवरण संलग्न करें)। ऐसे व्यक्ति का दोबारा से अपराध करने की संभावना होती है।

ii. आरोपी द्वारा अपराध करने के बाद पीड़ित / गवाहों को धमकी देना (गवाह / पीड़ित की ताजा शिकायत संलग्न करें)।

iii. आरोपी लंबे समय से पीड़ित को परेशान / पीछा / धमका रहा हो। ऐसे व्यक्ति द्वारा फिर से अपराध किए जाने या पीड़ित को डराने की संभावना रहती है।

iv. सही तरीके से अनुसंधान के लिए गिरफ्तारी आवश्यक हो—जैसे कि सह-आरोपी की गिरफ्तारी, हथियार/दस्तावेज/चोरी की संपत्ति की बरामदगी इत्यादि (सह-आरोपी व बरामदगी योग्य वस्तुओं का विवरण दें)।

v. जब आरोपी द्वारा धारा 35(3)/179 BNSS के तहत भेजे गए नोटिस का उत्तर न दिया गया हो (नोटिस की तामील का प्रमाण संलग्न करें)। ऐसे व्यक्ति द्वारा अनुसंधान में बाधा डालने या अदालत में पेश न होने की प्रबल संभावना होती है।

vi. जब नोटिस 35(3)/179 BNSS की तामील ही संभव न हो पाई हो क्योंकि आरोपी फरार है (रेड का विवरण दें)। ऐसे व्यक्ति के अनुसंधान में बाधा डालने या अदालत में पेश न होने की संभावना रहती है।

vii. आरोपी पूर्व में उद्घोषित अपराधी / बेल जम्पर / पैरोल जम्पर रह चुका हो (ऐसे विवरण प्रस्तुत करें)। ऐसे व्यक्ति के अनुसंधान में बाधा डालने या अदालत में पेश न होने की संभावना अधिक होती है।

viii. आरोपी के भागने की संभावना हो (हवाई / रेल टिकट, विदेश में रहने वाले नजदीकी रिश्तेदारों के विवरण आदि प्रस्तुत करें)। ऐसे व्यक्ति के अदालत में अनुपस्थित रहने की संभावना अधिक होती है।

ix. जब आरोपी जमानती / गारंटर प्रस्तुत करने में असमर्थ हो। ऐसे व्यक्ति द्वारा न्यायिक प्रक्रिया में बाधा डालने या अदालत में पेश न होने की संभावना अधिक होती है।

2. धारा 35(1)(b), BNSS के अंतर्गत 7 वर्ष तक की सजा वाले अपराधों में आरोपियों को नोटिस देने और गिरफ्तारी करने की सामान्यतः क्या प्रक्रिया होनी चाहिए?

A. हमेशा धारा 179 BNSS के तहत नोटिस जारी करें, क्योंकि अनुसंधान में शामिल हुए बिना यह तय कर पाना मुश्किल होता है कि आरोपी की गिरफ्तारी आवश्यक है या नहीं।

I. नोटिस तामील करने का प्रयास पहले व्यक्तिगत रूप / Registered Post/Speed Post से करें। यदि आरोपी नोटिस लेने से बच रहा है, तो वह नोटिस उसके घर के वयस्क सदस्य को दिया जा सकता है और घर के दरवाजे पर चिपकाया जा सकता है। प्राप्ति रसीद, फोटो-वीडियो प्रमाण और दरवाजे पर चिपकाने की प्रक्रिया सहित समुचित दस्तावेजीकरण को फाइल का हिस्सा बनाया जाना चाहिए।

II. नोटिस प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज होते ही या यथासंभव शीघ्र जारी किया जाना चाहिए।

III. आरोपी का नाम सामने आने (FIR/पर्दा इन्कसाफ) के 7 से 15 दिनों के भीतर 2-3 नोटिस जारी किए जाने चाहिए।

B. जब आरोपी धारा 179 BNSS के तहत अनुसंधान में शामिल हो गया हो:

I. यदि अनुसंधान अधिकारी को लगता है कि आरोपी को गिरफ्तार करने की आवश्यकता नहीं है और गिरफ्तारी के बिना चालान दाखिल किया जा सकता है, तो उसे मौके पर ही धारा 35(3) BNSS के तहत नोटिस व्यक्तिगत रूप से दिया जाएगा और आरोपी से उस पर हस्ताक्षर लिए जाएंगे। इसके बाद उसकी पुनः Statement दर्ज की जाए। धारा 35(3) BNSS के तहत नोटिस देने के बाद उसके बयान फिर से दर्ज किए जाएंगे।

II. यदि अनुसंधान अधिकारी को लगता है कि आरोपी की गिरफ्तारी आवश्यक है, तो उसे गिरफ्तार किया जाए। ऐसे में धारा 35(3) BNSS के तहत नोटिस देने की आवश्यकता नहीं है।

C. यदि आरोपी 15 दिनों के भीतर **अनुसंधान में शामिल नहीं** होता:

I. केस डायरी में यह स्पष्ट रूप से उल्लेख करें कि आरोपी नोटिस तामील होने के बाद भी अनुसंधान से बच रहा है, जिससे अनुसंधान में बाधा आ रही है और यह संभावना है कि वह आगे चलकर न्यायालय की कार्यवाही में शामिल न हो।

II. ऐसे आरोपी को शीघ्र गिरफ्तार किया जाए।

D. गिरफ्तारी के बाद (चाहे आरोपी ने पूर्व में अनुसंधान में भाग लिया हो या नहीं):

I. गिरफ्तारी मेमो को ठीक प्रकार से भरें और गिरफ्तारी के आधार (grounds of arrest) स्पष्ट रूप से उसमें अंकित करें।

II. यदि अपराध जमानती है, तो पुलिस द्वारा जमानत दी जा सकती है।

लेकिन यदि इलाका मजिस्ट्रेट इस प्रकार के हैं कि भले ही धारा 190(2) BNSS का अनुपालन हो चुका हो, फिर भी आरोपी को चालान के साथ पेश किए जाने पर ही जमानत दी जाती है, तो ऐसे मामलों में पुलिस द्वारा आरोपी को जमानत न दी जाए। आरोपी को 24 घंटे के भीतर मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया जाए और बताया जाए कि आरोपी जमानत के लिए जमानती प्रस्तुत नहीं कर सका।

III. यदि आरोपी को मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया जा रहा है, तो चेक लिस्ट को ठीक प्रकार से भरना आवश्यक है।

भारत के सुप्रीम कोर्ट ने स्पष्ट किया कि नोटिस जारी करना नियम है और गिरफ्तारी अपवाद

भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 की धारा 35 के तहत भारत के सुप्रीम कोर्ट ने, *"सतेंद्र कुमार अंतिल बनाम केंद्रीय जांच ब्यूरो"* मामले में, भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 [BNSS] की धारा 35 की व्याख्या करते हुए एक महत्वपूर्ण फैसला सुनाया।

यह फैसला BNSS की धारा 35(1)(b) के तहत गिरफ्तारी की शक्ति और BNSS की धारा 35(3) के तहत नोटिस जारी करने की अनिवार्य आवश्यकता के बीच के आपसी संबंध को आधिकारिक रूप से स्पष्ट करता है; विशेष रूप से उन मामलों में जिनमें 7 (सात) साल तक की कैद की सजा वाले अपराध शामिल हैं।

यह फैसला कानून की स्थिति को इस प्रकार तय करता है कि ऐसे मामलों में BNSS की धारा 35(3) के तहत नोटिस जारी करना नियम है, जबकि BNSS की धारा 35(1)(b) के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 35(6) के तहत गिरफ्तारी एक सीमित अपवाद है। ऐसा करते हुए, सुप्रीम कोर्ट ने BNSS के तहत वैधानिक सुरक्षा उपायों को भारत के संविधान, 1950 के अनुच्छेद 21 के तहत संवैधानिक जनादेश के साथ सामंजस्य बिठाया।

मुद्दे

सुप्रीम कोर्ट ने इस बात पर विचार किया कि क्या BNSS की धारा 35(3) के तहत नोटिस उन सभी मामलों में अनिवार्य रूप से जारी किए जाने चाहिए जिनमें 7 (सात) साल तक की कैद की सजा वाले अपराध शामिल हैं। विचार के लिए एक परिणामी प्रश्न यह उठा कि क्या, BNSS की धारा 35(1)(b)(i) और 35(1) (b) (ii) के तहत परिकल्पित परिस्थितियों की अनुपस्थिति में, ऐसे मामलों में किसी पुलिस अधिकारी द्वारा की गई गिरफ्तारी कानूनी रूप से उचित होगी।

विश्लेषण और निष्कर्ष

गिरफ्तारी विवेकाधीन है, कोई सामान्य प्रक्रिया नहीं

शुरुआत में ही, सुप्रीम कोर्ट ने दोहराया कि BNSS की धारा 35(1) के तहत गिरफ्तारी की शक्ति विवेकाधीन है, जैसा कि 'सकता है' (may) शब्द के उपयोग से स्पष्ट होता है। गिरफ्तारी की वैधानिक शक्ति का होना, उस शक्ति का प्रयोग करने के औचित्य से अलग है। किसी को सिर्फ इसलिए गिरफ्तार नहीं किया जा सकता है क्योंकि ऐसा करना कानूनी तौर पर सही है।

स्थापित मिसालों पर भरोसा करते हुए, जिनमें *"जोगिंदर कुमार बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य"* शामिल हैं, सुप्रीम कोर्ट ने इस बात पर जोर दिया कि गिरफ्तारी और हिरासत के व्यक्तिगत स्वतंत्रता और प्रतिष्ठा पर गंभीर परिणाम होते हैं, और इसलिए इन्हें किसी भी तरह से रूटीन या यांत्रिक तरीके से नहीं किया जा सकता। जांच अधिकारी को गिरफ्तारी की आवश्यकता पर अपना दिमाग लगाना चाहिए और उसे सिर्फ अपनी शक्ति होने के आधार पर नहीं, बल्कि स्वतंत्र रूप से इसे सही ठहराने में सक्षम होना चाहिए।

सुप्रीम कोर्ट ने आगे यह भी कहा कि जांच का मुख्य उद्देश्य सबूत इकट्ठा करना और अभियोजन के संबंध में राय बनाना होता है। गिरफ्तारी जांच का कोई अनिवार्य हिस्सा नहीं है। कानूनी ढांचा यह मानता है कि आरोपी को हिरासत में लिए बिना भी जांच प्रभावी ढंग से आगे बढ़ सकती है।

धारा 35(1)(b) के तहत दोहरी शर्तें एक साथ पूरी होनी चाहिए और उनका सख्ती से पालन किया जाना चाहिए।

सुप्रीम कोर्ट ने फैसला दिया कि 7 साल तक की कैद की सजा वाले अपराधों के लिए, BNSS की धारा 35(1)(b) के तहत गिरफ्तारी की शक्ति, दो संचयी आवश्यकताओं के सख्ती से पालन पर निर्भर करती है।

पहला, BNSS की धारा 35(1)(b)(i) के तहत, पुलिस अधिकारी के पास शिकायत, विश्वसनीय जानकारी या उचित संदेह के आधार पर, यह 'विश्वास करने का कारण' होना चाहिए कि उस व्यक्ति ने अपराध किया है। यह आवश्यकता बुनियादी है और वस्तुनिष्ठ सामग्री पर आधारित होनी चाहिए।

दूसरा, BNSS की धारा 35(1)(b)(ii) के तहत, पुलिस अधिकारी को इस बात से संतुष्ट होना चाहिए कि गिरफ्तारी निर्दिष्ट उद्देश्यों में से किसी एक के लिए आवश्यक है, जैसे कि आगे के अपराध को रोकना, उचित जांच सुनिश्चित करना, सबूतों के साथ छेड़छाड़ को रोकना, गवाहों को प्रलोभन या धमकी देने से रोकना, या अदालत के सामने उनकी उपस्थिति सुनिश्चित करना। सुप्रीम कोर्ट ने स्पष्ट किया कि यह जरूरी नहीं है कि BNSS की धारा 35(1)(b)(ii) के तहत सभी शर्तें पूरी हों; उनमें से किसी एक का भी पूरा होना काफी होगा। हालांकि, गिरफ्तारी की आवश्यकता की शर्त वास्तविक है, न कि केवल दिखावटी।

सुप्रीम कोर्ट ने '*अनिल कुमार बनाम बिहार राज्य*' और '*सतेंद्र कुमार अंतिल बनाम केंद्रीय जांच ब्यूरो*' मामलों में दिए गए सिद्धांतों को फिर से दोहराया। कोर्ट ने कहा कि 'विश्वास करने का कारण' और 'गिरफ्तारी की आवश्यकता के प्रति संतुष्टि'—ये दोनों शर्तें लिखित रूप में दर्ज की जानी चाहिए।

भले ही ये शर्तें मौजूद हों, फिर भी गिरफ्तारी अनिवार्य नहीं है। अधिकारी के पास विवेकाधिकार सुरक्षित रहता है, और उसे इस अधिकार का प्रयोग वस्तुनिष्ठ आवश्यकता और संवैधानिक सुरक्षा उपायों की कसौटी पर कसकर ही करना चाहिए।

BNSS की धारा 35(3) के तहत नोटिस जारी करना सामान्य नियम है; जबकि BNSS की धारा 35(6) के तहत गिरफ्तारी एक सीमित अपवाद है।

सुप्रीम कोर्ट ने BNSS की धाराओं 35(1)(b), 35(3), 35(5) और 35(6) की सामंजस्यपूर्ण व्याख्या की। कोर्ट ने यह व्यवस्था दी कि BNSS की धारा 35(3)—जो यह अनिवार्य करती है कि जहाँ उप-धारा (1) के तहत गिरफ्तारी की आवश्यकता नहीं है, वहाँ नोटिस जारी किया जाए—उन अपराधों पर पूरी तरह से लागू होती है जिनके लिए 7 वर्ष तक के कारावास का दंड निर्धारित है।

सुप्रीम कोर्ट ने स्पष्ट रूप से कहा कि ऐसे मामलों में BNSS की धारा 35(3) के तहत नोटिस जारी करना ही सामान्य नियम है।

एक बार जब ऐसा नोटिस जारी हो जाता है और संबंधित व्यक्ति उसकी शर्तों का पालन करता है, और ऐसा करना जारी रखता है, तो धारा 35(5) गिरफ्तारी के खिलाफ एक निहित रोक लगाती है। उस चरण पर गिरफ्तारी केवल तभी की जा सकती है, जब पुलिस अधिकारी ऐसे विशिष्ट कारण दर्ज करे, जिनसे यह साबित हो कि हिरासत में लेना आवश्यक हो गया है।

BNSS की धारा 35(6) के संबंध में, सुप्रीम कोर्ट ने स्पष्ट किया कि नोटिस का पालन न करने के मामलों में भी, गिरफ्तारी अपने आप नहीं हो जाती। पालन न करने से अधिकारी को केवल गिरफ्तारी पर विचार करने का अधिकार मिलता है; यह गिरफ्तारी को अनिवार्य नहीं बनाता। अधिकारी को स्वतंत्र रूप से यह आकलन करना होगा कि क्या जांच के लिए गिरफ्तारी आवश्यक हो गई है। महत्वपूर्ण बात यह है कि सुप्रीम कोर्ट ने माना कि BNSS की धारा 35(6) के तहत गिरफ्तारी उन नई महत्वपूर्ण बात यह है कि सुप्रीम कोर्ट ने माना कि BNSS की धारा 35(6) के तहत गिरफ्तारी उन नई परिस्थितियों या सामग्री पर आधारित होनी चाहिए, जो BNSS की धारा 35(3) के तहत नोटिस जारी करते समय उपलब्ध नहीं थीं। इस शक्ति का प्रयोग संयम से और सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए।

सुप्रीम कोर्ट ने आगे टिप्पणी की कि ये वैधानिक सुरक्षा उपाय संविधान के अनुच्छेद 21 में निहित हैं, और कोई भी ऐसी व्याख्या जो इन्हें केवल प्रक्रियात्मक औपचारिकता तक सीमित कर दे, वह विधायी उद्देश्य को विफल कर देगी। गिरफ्तारी को केवल पूछताछ के उद्देश्य से उचित नहीं ठहराया जा सकता। यह सख्त वस्तुनिष्ठ आवश्यकता पर आधारित होनी चाहिए।

निष्कर्ष

सुप्रीम कोर्ट ने निष्कर्ष निकाला कि 7 वर्ष तक के कारावास से दंडनीय अपराधों में, BNSS की धारा 35 के तहत वैधानिक ढांचा एक स्पष्ट पदानुक्रम स्थापित करता है; BNSS की धारा 35(3) के तहत नोटिस जारी करना सामान्य नियम है, जबकि BNSS की धारा 35(1)(b) के साथ पढ़ी गई धारा 35(6) के तहत गिरफ्तारी एक अपवाद है।

गिरफ्तारी एक वैधानिक विवेकाधिकार है, न कि जांच का कोई अनिवार्य कदम। पुलिस अधिकारी को उस शक्ति का प्रयोग करने से पहले सचेत रूप से यह प्रश्न पूछना चाहिए कि क्या गिरफ्तारी वास्तव में आवश्यक है। भले ही वैधानिक शर्तें मौजूद हों, गिरफ्तारी तब तक नहीं की जानी चाहिए, जब तक कि वह पूरी तरह से आवश्यक न हो।

यह निर्णय व्यक्तिगत स्वतंत्रता की संवैधानिक गारंटी को सुदृढ़ करता है और यह सुनिश्चित करता है कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 से BNSS में संक्रमण के दौरान, न्यायिक व्याख्या के माध्यम से विकसित सुरक्षा उपायों में कोई कमी न आए। 7 साल तक की सजा वाले अपराधों में यह फिर से दोहराते हुए कि "नोटिस देना नियम है और गिरफ्तारी अपवाद", सुप्रीम कोर्ट ने बहुत जरूरी स्पष्टता दी है और इस सिद्धांत को मजबूत किया है कि आज़ादी छीनना हमेशा आखिरी उपाय ही होना चाहिए।

2. स्थगन (Adjournment) पर न्यायालयीन नियंत्रण

न्यायिक प्रक्रिया का उद्देश्य केवल न्याय करना ही नहीं, बल्कि समयबद्ध एवं प्रभावी न्याय (Timely and Effective Justice) प्रदान करना भी है। अनावश्यक स्थगन (Unnecessary Adjournments) न्यायिक विलंब का प्रमुख कारण है, जिससे पीड़ित, अभियुक्त तथा समाज—सभी प्रभावित होते हैं। इसी कारण न्यायालयों ने स्थगन प्रदान करने की शक्ति पर कठोर नियंत्रण स्थापित किया है।

(A) अनावश्यक स्थगन पर न्यायालयों की सख्ती

1. विधिक आधार

BNSS, 2023 की धारा 346 (पूर्व CrPC धारा 309) के अनुसार—

> कार्यवाही प्रारम्भ होने के बाद उसे यथासंभव दिन-प्रतिदिन चलाया जाएगा तथा स्थगन केवल आवश्यक कारणों से ही दिया जाएगा।
>
> अर्थात् स्थगन कोई अधिकार (Right) नहीं बल्कि न्यायालय का विवेकाधीन (Discretionary) आदेश है।

2. न्यायिक दृष्टिकोण

उच्चतम न्यायालय ने बार-बार कहा है कि—

> "Justice delayed is justice denied."
> बार-बार स्थगन देने से न्यायिक प्रक्रिया का उद्देश्य विफल हो जाता है तथा जनता का न्यायपालिका पर विश्वास प्रभावित होता है।

3. प्रमुख निर्णय

① **Vinod Kumar v. State of Punjab**

सर्वोच्च न्यायालय ने कहा—

- गवाह उपस्थित होने पर अनावश्यक स्थगन नहीं दिया जाना चाहिए।
- जिरह (Cross-examination) उसी दिन पूरी करने का प्रयास किया जाना चाहिए।
- स्थगन को सामान्य नियम नहीं बनाया जा सकता।

सिद्धांत:

> "Adjournment cannot be claimed as a matter of right."

② **State of U.P. v. Shambhu Nath Singh**

न्यायालय ने कहा—
- गवाहों की उपस्थिति के बावजूद स्थगन देना न्यायहित के विरुद्ध है।
- न्यायालय को मुकदमे की प्रगति पर सक्रिय नियंत्रण रखना चाहिए।

---

4. न्यायिक तर्क (Legal Reasoning)

अनावश्यक स्थगन से—
- साक्ष्य की गुणवत्ता प्रभावित होती है।
- गवाहों की स्मृति कमजोर हो सकती है।
- पीड़ित को मानसिक कष्ट होता है।
- अभियुक्त लंबे समय तक मुकदमे का बोझ झेलता है।
- न्यायिक संसाधनों का दुरुपयोग होता है।

इसलिए न्यायालय केवल अपरिहार्य परिस्थितियों (Exceptional Circumstances) में ही स्थगन प्रदान करता है।

(B) त्वरित ट्रायल (Speedy Trial) के सिद्धांत का प्रवर्तन

1. संवैधानिक आधार

त्वरित ट्रायल का अधिकार अनुच्छेद 21 के अंतर्गत जीवन एवं व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार का अभिन्न भाग है।

यदि मुकदमे में अनुचित विलंब हो तो यह संविधान प्रदत्त मौलिक अधिकार का उल्लंघन माना जा सकता है।

2. ऐतिहासिक विकास

① **Hussainara Khatoon v. State of Bihar**

इस निर्णय में सर्वोच्च न्यायालय ने पहली बार स्पष्ट किया—

> “Speedy trial is a fundamental right under Article 21.”
>
> न्यायालय ने कहा कि वर्षों तक लंबित मुकदमे व्यक्ति की स्वतंत्रता पर अनुचित प्रतिबंध हैं।

② **A.R. Antulay v. R.S. Nayak**

न्यायालय ने त्वरित ट्रायल से संबंधित विस्तृत दिशानिर्देश निर्धारित किए।
मुख्य बिंदु—
- प्रत्येक मामले के तथ्य अलग होंगे।

- विलंब के कारणों की जांच की जाएगी।
- अभियुक्त को हुई वास्तविक क्षति (Prejudice) पर विचार होगा।
- कोई निश्चित समय-सीमा सार्वभौमिक रूप से लागू नहीं की जा सकती।

③ **P. Ramachandra Rao v. State of Karnataka**

न्यायालय ने कहा—

- त्वरित ट्रायल मौलिक अधिकार है।
- परंतु मुकदमों के लिए कठोर एवं यांत्रिक समय-सीमा निर्धारित नहीं की जा सकती।

3. BNSS का दृष्टिकोण

BNSS का उद्देश्य—

- समयबद्ध जांच,
- समयबद्ध विचारण,
- डिजिटल प्रक्रियाओं का उपयोग,
- अनावश्यक स्थगनों पर नियंत्रण,

द्वारा न्यायिक विलंब को कम करना है।

4. न्यायिक तर्क (Legal Reasoning)

त्वरित ट्रायल आवश्यक है क्योंकि—

अभियुक्त के लिए

- लंबे समय तक मुकदमा स्वयं एक दंड जैसा बन जाता है।
- प्रतिष्ठा एवं आजीविका प्रभावित होती है।

पीड़ित के लिए

- न्याय में विश्वास बना रहता है।
- मानसिक संतुष्टि प्राप्त होती है।

समाज के लिए

- विधि के शासन (Rule of Law) की स्थापना होती है।
- अपराध नियंत्रण की प्रभावशीलता बढ़ती है।

(C) अभियोजन एवं बचाव पक्ष की जिम्मेदारी

न्यायिक प्रक्रिया केवल न्यायालय की जिम्मेदारी नहीं है। अभियोजन (Prosecution) तथा बचाव पक्ष (Defence) दोनों पर निष्पक्ष एवं शीघ्र विचारण सुनिश्चित करने का दायित्व है।

1. अभियोजन की जिम्मेदारी

(i) गवाहों की उपस्थिति सुनिश्चित करना

- समन समय पर जारी कराना।
- गवाहों का समुचित समन्वय करना।
- अनावश्यक अनुपस्थिति रोकना।

(ii) जांच एवं दस्तावेजों की तैयारी

- केस डायरी अद्यतन रखना।
- दस्तावेज समय पर प्रस्तुत करना।
- डिजिटल एवं भौतिक साक्ष्यों का उचित संरक्षण करना।

(iii) अनावश्यक स्थगन न मांगना

अभियोजन को केवल वास्तविक आवश्यकता होने पर ही स्थगन मांगना चाहिए।

बार-बार स्थगन मांगना न्यायिक प्रक्रिया का दुरुपयोग माना जा सकता है।

---

2. बचाव पक्ष की जिम्मेदारी

(i) जिरह में अनावश्यक विलंब न करना

- गवाह उपस्थित होने पर जिरह पूरी करने का प्रयास।
- तकनीकी आधारों पर बार-बार स्थगन से बचना।

(ii) न्यायालय के साथ सहयोग

- समय पर उपस्थिति।
- आवश्यक आवेदन समय पर दाखिल करना।
- मुकदमे को लंबा खींचने की रणनीति न अपनाना।

(iii) अभियुक्त के अधिकारों की रक्षा

बचाव पक्ष का कर्तव्य केवल विलंब करना नहीं बल्कि—

- निष्पक्ष सुनवाई (Fair Trial),
- प्रभावी प्रतिरक्षा (Effective Defence),
- संवैधानिक अधिकारों की सुरक्षा

सुनिश्चित करना है।

3. न्यायालय की निगरानी भूमिका

न्यायालय को यह देखना होता है कि—

- अभियोजन जानबूझकर विलंब न करे;
- बचाव पक्ष प्रक्रिया का दुरुपयोग न करे;
- मुकदमा अनावश्यक रूप से लंबित न रहे;
- त्वरित एवं निष्पक्ष न्याय के बीच संतुलन बना रहे।

प्रस्तुति हेतु निष्कर्ष (Conclusion)

स्थगन न्यायिक विवेक का अपवादात्मक साधन है, न कि पक्षकारों का अधिकार। BNSS तथा अनुच्छेद 21 की संवैधानिक भावना के अनुरूप न्यायालयों का दायित्व है कि वे अनावश्यक स्थगनों पर कठोर नियंत्रण रखें, त्वरित ट्रायल के सिद्धांत को प्रभावी रूप से लागू करें तथा अभियोजन एवं बचाव पक्ष दोनों को न्यायिक प्रक्रिया में उत्तरदायी बनाएं। यही निष्पक्ष, प्रभावी एवं समयबद्ध आपराधिक न्याय प्रणाली की आधारशिला है।

3. Evidence Interpretation (साक्ष्य की व्याख्या): आधुनिक न्यायिक दृष्टिकोण

न्यायिक प्रक्रिया का मूल आधार साक्ष्य (Evidence) है। न्यायालय का प्रत्येक निष्कर्ष, चाहे वह दोषसिद्धि (Conviction) हो अथवा दोषमुक्ति (Acquittal), साक्ष्यों के मूल्यांकन पर आधारित होता है। तकनीकी विकास एवं डिजिटल क्रांति के वर्तमान युग में अपराध, संचार, वित्तीय लेन-देन तथा सामाजिक गतिविधियों का बड़ा भाग इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से संचालित हो रहा है। परिणामस्वरूप न्यायालयों के समक्ष पारंपरिक मौखिक एवं दस्तावेजी साक्ष्यों के साथ-साथ डिजिटल एवं इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्यों का महत्व अत्यधिक बढ़ गया है।

भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 (Bharatiya Sakshya Adhiniyam, 2023) ने इस वास्तविकता को स्वीकार करते हुए इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड्स को साक्ष्य प्रणाली का अभिन्न अंग बनाया है। वर्तमान न्यायिक दृष्टिकोण केवल साक्ष्य की उपलब्धता तक सीमित नहीं है, बल्कि उसकी प्रामाणिकता (Authenticity), विश्वसनीयता (Reliability), स्वीकार्यता (Admissibility) तथा सुरक्षा श्रृंखला (Chain of Custody) पर विशेष बल देता है।

I. डिजिटल एवं इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य : आधुनिक न्याय व्यवस्था की आवश्यकता

डिजिटल साक्ष्य का अर्थ

डिजिटल अथवा इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य से अभिप्राय ऐसे साक्ष्य से है जो किसी इलेक्ट्रॉनिक उपकरण, कंप्यूटर प्रणाली अथवा डिजिटल माध्यम में संग्रहित, निर्मित अथवा संचारित हुआ हो।

इसके अंतर्गत निम्नलिखित साक्ष्य सम्मिलित हैं—

- WhatsApp Chats
- E-mails
- SMS Messages
- CCTV Footage
- Mobile Recordings
- Audio-Video Files
- Call Detail Records (CDR)
- GPS एवं Location Data
- Social Media Posts
- Cloud Storage Data
- Computer Generated Documents

आज अनेक मामलों में अपराध का प्रत्यक्षदर्शी गवाह उपलब्ध नहीं होता, किन्तु डिजिटल साक्ष्य घटना की वास्तविक तस्वीर प्रस्तुत कर देते हैं। यही कारण है कि न्यायालय डिजिटल साक्ष्यों को अत्यधिक महत्व प्रदान कर रहे हैं।

II. भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 के अंतर्गत डिजिटल साक्ष्य

BSA ने इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड को स्पष्ट रूप से साक्ष्य की श्रेणी में सम्मिलित किया है।

प्रमुख विशेषताएँ

(1) Electronic Record को दस्तावेज के रूप में मान्यता

अब इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड भी पारंपरिक दस्तावेजों के समान विधिक महत्व रखते हैं।

(2) Electronic Evidence की Admissibility

इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड तभी स्वीकार्य होगा जब वह अधिनियम में निर्धारित आवश्यकताओं का पालन करता हो।

(3) Certificate की आवश्यकता

इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड की सत्यता सुनिश्चित करने के लिए प्रमाण-पत्र (Certificate) आवश्यक माना गया है।

(4) Forensic Verification का बढ़ता महत्व

आधुनिक न्यायिक दृष्टिकोण केवल दस्तावेज प्रस्तुत करने तक सीमित नहीं है, बल्कि उसकी तकनीकी जांच को भी आवश्यक मानता है।

III. Admissibility और Reliability : न्यायालय का द्विस्तरीय परीक्षण

डिजिटल साक्ष्य के मूल्यांकन में न्यायालय दो अलग-अलग प्रश्नों पर विचार करता है—

1. Admissibility (स्वीकार्यता)

यह प्रश्न विधि का प्रश्न है।

न्यायालय यह देखता है कि—

- क्या साक्ष्य वैधानिक आवश्यकताओं का पालन करता है?
- क्या आवश्यक प्रमाण-पत्र उपलब्ध है?
- क्या साक्ष्य विधि द्वारा अनुमत तरीके से प्राप्त किया गया है?

यदि इन शर्तों का पालन नहीं किया गया है तो साक्ष्य न्यायालय में स्वीकार ही नहीं किया जाएगा।

2. Reliability (विश्वसनीयता)

यह तथ्य का प्रश्न है।

न्यायालय यह देखता है कि—

- क्या साक्ष्य वास्तविक है?
- क्या उसमें छेड़छाड़ हुई है?
- क्या उसका स्रोत विश्वसनीय है?
- क्या अन्य साक्ष्य उसका समर्थन करते हैं?

अतः कोई साक्ष्य admissible तो हो सकता है, परंतु आवश्यक नहीं कि वह reliable भी हो।

IV. इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य पर प्रमुख न्यायिक निर्णय

1. Anvar P.V. v. P.K. Basheer (2014)

सिद्धांत

उच्चतम न्यायालय ने कहा कि—

> Secondary Electronic Evidence बिना आवश्यक प्रमाण-पत्र के स्वीकार्य नहीं है।
>
> इस निर्णय ने इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य की स्वीकार्यता के लिए तकनीकी आवश्यकताओं को अनिवार्य बना दिया।

महत्व

- Electronic Evidence के लिए विधिक मानक स्थापित।

- Authenticity को प्राथमिकता प्रदान।

2. Arjun Panditrao Khotkar v. Kailash Kushanrao Gorantyal (2020)

सिद्धांत

संविधान पीठ ने स्पष्ट किया कि—

> Electronic Evidence के लिए Certificate एक अनिवार्य आवश्यकता है।

न्यायालय का दृष्टिकोण

सिर्फ रिकॉर्ड प्रस्तुत कर देना पर्याप्त नहीं है।

न्यायालय को यह विश्वास होना चाहिए कि—

- रिकॉर्ड वास्तविक है।
- उसमें छेड़छाड़ नहीं हुई।
- उसका स्रोत प्रमाणित है।

महत्व

आज इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य के संबंध में यह प्रमुख निर्णय माना जाता है।

3. Tomaso Bruno v. State of Uttar Pradesh (2015)

सिद्धांत

न्यायालय ने कहा—

> उपलब्ध इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य प्रस्तुत न करना अभियोजन के विरुद्ध प्रतिकूल अनुमान (Adverse Inference) उत्पन्न कर सकता है।

महत्व

- CCTV और Electronic Records का महत्व स्वीकार।

- वैज्ञानिक जांच को बढ़ावा.

V. Chain of Custody : डिजिटल साक्ष्य की रीढ़

अर्थ

Chain of Custody से आशय उस संपूर्ण प्रक्रिया से है जिसके माध्यम से साक्ष्य की प्राप्ति से लेकर न्यायालय में प्रस्तुति तक उसका रिकॉर्ड सुरक्षित रखा जाता है।

· Chain of Custody क्यों आवश्यक है?

·

डिजिटल डेटा की सबसे बड़ी समस्या यह है कि—

उसमें बिना किसी स्पष्ट संकेत के परिवर्तन (Modification) किया जा सकता है।

इसलिए न्यायालय यह सुनिश्चित करना चाहता है कि प्रस्तुत किया गया डेटा वही है जो मूल रूप से प्राप्त हुआ था।

Chain of Custody के चरण

1. Collection (संग्रह)
   - साक्ष्य कहाँ से प्राप्त हुआ?
   - किस अधिकारी ने जब्त किया?
   - किस समय जब्त किया?
2. Preservation (संरक्षण)
   - Device को Seal किया गया या नहीं।
   - Hash Value तैयार की गई या नहीं।
   - डेटा सुरक्षित रखा गया या नहीं।
3. Transfer (हस्तांतरण)
   - किस अधिकारी को सौंपा गया?
   - कब सौंपा गया?
   - किस उद्देश्य से सौंपा गया?
4. Analysis (विश्लेषण)
   - Forensic Laboratory में परीक्षण।
   - रिपोर्ट तैयार करना।
5. Court Production (न्यायालय में प्रस्तुति)
   - क्या वही साक्ष्य प्रस्तुत हुआ?
   - क्या उसकी पहचान स्थापित हुई?

Chain टूटने का प्रभाव

यदि Chain of Custody में कोई महत्वपूर्ण कड़ी सिद्ध नहीं होती तो—

- Tampering की संभावना उत्पन्न होती है।
- Reliability कम हो जाती है।
- न्यायालय संदेह का लाभ अभियुक्त को दे सकता है।

Presentation Line

> "Every link in the chain must be proved; otherwise authenticity becomes doubtful."

VI. Certification of Electronic Evidence

Certification का उद्देश्य

Certification यह सुनिश्चित करता है कि—

- Electronic Record वास्तविक है।
- नियमित Computer System से प्राप्त हुआ है।
- उसमें कोई छेड़छाड़ नहीं हुई।
- प्रस्तुत प्रति मूल रिकॉर्ड का सही प्रतिबिंब है।

Certificate में क्या होना चाहिए?

- Electronic Record का विवरण
- Device का विवरण
- Record प्राप्त करने की प्रक्रिया
- System की कार्यप्रणाली
- अधिकृत व्यक्ति का प्रमाणन

व्यावहारिक उदाहरण

WhatsApp Chat

केवल Screenshot पर्याप्त नहीं है।

न्यायालय यह देखेगा—

- किस मोबाइल से प्राप्त हुई?
- चैट का स्रोत क्या है?
- Certificate उपलब्ध है या नहीं?

CCTV Footage

न्यायालय यह जांचेगा—

- DVR का विवरण
- फुटेज निकालने की प्रक्रिया
- समय एवं तिथि
- Certificate

E-mail Evidence
न्यायालय विचार करेगा—

- Sender की पहचान
- Server Record
- Metadata
- Certification

VII. Contradiction Handling : विरोधाभासों का न्यायिक समाधान

डिजिटल साक्ष्य और मौखिक साक्ष्य में विरोधाभास उत्पन्न होना सामान्य बात है।
ऐसी स्थिति में न्यायालय निम्नलिखित परीक्षण अपनाता है—

1. Source Test
कौन सा स्रोत अधिक विश्वसनीय है?

2. Authenticity Test
क्या डिजिटल रिकॉर्ड वास्तविक है?

3. Corroboration Test
क्या अन्य साक्ष्य उसका समर्थन करते हैं?

4. Forensic Test
क्या तकनीकी परीक्षण उसकी पुष्टि करता है?

उदाहरण

यदि कोई गवाह कहता है—

"मैं घटना स्थल पर उपस्थित नहीं था।"

किन्तु—
- CCTV Footage,
- Mobile Location,
- GPS Data,
- Toll Records,

उसकी उपस्थिति सिद्ध करते हैं, तो न्यायालय इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य को अधिक महत्व दे सकता है।

VIII. आधुनिक न्यायिक प्रवृत्तियाँ

वर्तमान में न्यायालय निम्न सिद्धांतों को अपनाते हैं—

(1) Scientific Evidence Preferred

वैज्ञानिक एवं तकनीकी साक्ष्य को बढ़ती प्राथमिकता।

(2) Oral Evidence Alone Not Sufficient

केवल मौखिक साक्ष्य पर निर्भरता कम।

(3) Authenticity Over Mere Production

सिर्फ रिकॉर्ड प्रस्तुत करना पर्याप्त नहीं।

(4) Forensic Validation Essential

फॉरेंसिक पुष्टि को महत्व।

(5) Digital Trail Never Lies

डिजिटल गतिविधियाँ अनेक बार घटनाओं का वस्तुनिष्ठ चित्र प्रस्तुत करती हैं।

निष्कर्ष

डिजिटल युग में साक्ष्य की व्याख्या का न्यायिक दृष्टिकोण व्यापक रूप से परिवर्तित हुआ है। न्यायालय अब केवल साक्ष्य के अस्तित्व को नहीं, बल्कि उसकी प्रामाणिकता, विश्वसनीयता, प्रमाणन तथा Chain of Custody की अखंडता को भी परखते हैं। इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य आज न्यायिक निर्णयों का महत्वपूर्ण आधार बन चुके हैं, किन्तु उनकी स्वीकार्यता और मूल्य उसी स्थिति में है जब उनकी सत्यता और छेड़छाड़-रहित स्थिति निर्विवाद रूप से सिद्ध हो सके।

समापन उद्धरण

> "आधुनिक न्याय व्यवस्था में डिजिटल साक्ष्य केवल तकनीकी जानकारी नहीं, बल्कि सत्य की खोज का एक शक्तिशाली माध्यम है; परंतु उसकी शक्ति उसकी प्रामाणिकता और विश्वसनीयता में निहित है।"

4. New Criminal Laws पर Judicial Trends

भारतीय न्याय संहिता (BNS), भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता (BNSS) एवं भारतीय साक्ष्य अधिनियम (BSA) के Practical Interpretation Trends तथा Procedural Fairness और Evidence Quality पर न्यायालयों का दृष्टिकोण

भारत में 1 जुलाई 2024 से लागू हुए नए आपराधिक कानूनों—भारतीय न्याय संहिता, 2023 (BNS), भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 (BNSS) तथा भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 (BSA)—का उद्देश्य आपराधिक न्याय प्रणाली को अधिक आधुनिक, तकनीकी रूप से सक्षम, पारदर्शी तथा प्रभावी बनाना है। इन कानूनों के लागू होने के पश्चात न्यायालयों द्वारा विकसित हो रहे प्रारम्भिक न्यायिक रुझान यह संकेत देते हैं कि न्यायपालिका केवल त्वरित न्याय (Speedy Justice) पर ही बल नहीं दे रही है, बल्कि निष्पक्ष प्रक्रिया (Procedural Fairness), उच्च गुणवत्ता वाले साक्ष्य (Evidence Quality) तथा संवैधानिक मूल्यों के संरक्षण को भी समान रूप से महत्त्व प्रदान कर रही है।

1. BNS, BNSS एवं BSA के Practical Interpretation Trends

न्यायालयों का दृष्टिकोण यह है कि नए आपराधिक कानूनों की व्याख्या केवल शब्दशः (Literal Interpretation) नहीं की जानी चाहिए, बल्कि उनके मूल उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए की जानी चाहिए। इन कानूनों का उद्देश्य न्याय प्रक्रिया को अधिक प्रभावी, पारदर्शी तथा नागरिक-अनुकूल बनाना है। इसलिए न्यायालय तकनीकी त्रुटियों या प्रक्रियागत कमियों को न्याय में बाधा बनने देने के बजाय वास्तविक न्याय (Substantive Justice) को प्राथमिकता दे रहे हैं।

न्यायालय यह भी मानते हैं कि आपराधिक प्रक्रिया केवल प्रशासनिक औपचारिकता नहीं है, बल्कि यह नागरिकों के मौलिक अधिकारों की सुरक्षा का एक महत्वपूर्ण साधन है। परिणामस्वरूप, गिरफ्तारी, तलाशी, जब्ती, पूछताछ तथा रिमांड जैसे सभी चरणों की व्याख्या संविधान के अनुच्छेद 21 में निहित जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार के अनुरूप की जा रही है। इस प्रकार, नए कानूनों के अनुप्रयोग में दक्षता और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के बीच संतुलन स्थापित करने का प्रयास स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

2. Digital Criminal Justice System को न्यायिक मान्यता

BNSS एवं BSA ने ई-एफआईआर, इलेक्ट्रॉनिक समन, वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग, ऑडियो-वीडियो रिकॉर्डिंग, डिजिटल तलाशी तथा इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य जैसे प्रावधानों को वैधानिक मान्यता प्रदान की है। न्यायालय इन प्रावधानों को आधुनिक समय की आवश्यकता मानते हैं क्योंकि साइबर अपराधों एवं डिजिटल लेन-देन से जुड़े मामलों में इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

हालाँकि न्यायालय यह भी स्पष्ट कर रहे हैं कि तकनीक का उपयोग न्यायिक प्रक्रिया को सुगम बनाने के लिए किया जा सकता है, परन्तु यह संवैधानिक सुरक्षा उपायों का विकल्प नहीं बन सकती। इसलिए डिजिटल साक्ष्य की प्रामाणिकता, डेटा की अखंडता (Data Integrity), निजता की सुरक्षा (Privacy Protection) तथा तकनीकी दुरुपयोग की संभावनाओं पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है।

3. Procedural Fairness पर न्यायालयों का विशेष बल

न्यायालयों का निरंतर यह मत रहा है कि किसी भी आपराधिक मुकदमे की वैधता इस बात पर निर्भर करती है कि उसकी प्रक्रिया कितनी निष्पक्ष, न्यायसंगत और उचित रही है। अनुच्छेद 21 के तहत विकसित न्यायशास्त्र के अनुसार निष्पक्ष प्रक्रिया (Fair Procedure) ही निष्पक्ष विचारण (Fair Trial) की आधारशिला है।

इस कारण न्यायालय यह सुनिश्चित करने का प्रयास कर रहे हैं कि आरोपी को पर्याप्त अवसर प्राप्त हो, जांच निष्पक्ष रूप से संपन्न हो, साक्ष्य विधिसम्मत तरीके से संकलित किए जाएँ तथा अभियोजन और बचाव पक्ष दोनों को समान अवसर प्रदान किए जाएँ। यदि जांच या विचारण की प्रक्रिया में गंभीर अनियमितता पाई जाती है, तो न्यायालय केवल अंतिम परिणाम पर नहीं बल्कि संपूर्ण प्रक्रिया की वैधता पर भी विचार करते हैं।

4. Investigation में Transparency और Accountability

नए कानूनों के अंतर्गत जांच प्रक्रिया में अधिक पारदर्शिता लाने का प्रयास किया गया है। तलाशी, जब्ती तथा अन्य महत्वपूर्ण जांच कार्यवाहियों की वीडियोग्राफी एवं डिजिटल रिकॉर्डिंग को प्रोत्साहित किया गया है। न्यायालयों का मत है कि ऐसी व्यवस्थाएँ पुलिस की जवाबदेही बढ़ाती हैं तथा झूठे आरोपों, मनगढ़ंत साक्ष्यों एवं प्रक्रियागत विवादों की संभावना को कम करती हैं।

डिजिटल रिकॉर्डिंग और दस्तावेजीकरण के माध्यम से जांच प्रक्रिया अधिक विश्वसनीय बनती है तथा न्यायालयों को भी घटनाओं का वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन करने में सहायता प्राप्त होती है। परिणामस्वरूप, पारदर्शिता और उत्तरदायित्व (Accountability) आधुनिक आपराधिक न्याय प्रणाली के महत्वपूर्ण तत्व बनते जा रहे हैं।

5. Victim-Centric Approach तथा Fair Trial के मध्य संतुलन

नए आपराधिक कानूनों में पीड़ितों के अधिकारों को अधिक महत्व दिया गया है। पीड़ितों को न्यायिक प्रक्रिया में अधिक सहभागिता तथा जानकारी प्राप्त करने के अवसर उपलब्ध कराए गए हैं। तथापि न्यायालय यह स्पष्ट कर रहे हैं कि पीड़ितों के अधिकारों का सशक्तीकरण आरोपी के अधिकारों के हनन का आधार नहीं बन सकता।

न्यायालयों का दृष्टिकोण यह है कि आपराधिक न्याय प्रणाली का उद्देश्य केवल अपराधी को दंडित करना नहीं, बल्कि न्याय के समग्र सिद्धांतों की रक्षा करना भी है। इसलिए पीड़ितों के अधिकारों और आरोपी के निष्पक्ष विचारण के अधिकार के बीच संतुलन बनाए रखना आवश्यक है।

6. Evidence Quality पर बढ़ता हुआ न्यायिक बल

भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 के लागू होने के पश्चात न्यायालयों का ध्यान साक्ष्यों की संख्या की अपेक्षा उनकी गुणवत्ता पर अधिक केंद्रित हो गया है। न्यायालय यह मानते हैं कि किसी भी साक्ष्य की उपयोगिता उसकी विश्वसनीयता, प्रामाणिकता और विधिक स्वीकार्यता पर निर्भर करती है।

इसलिए केवल अनेक गवाह प्रस्तुत करना पर्याप्त नहीं माना जाता, बल्कि यह आवश्यक है कि प्रस्तुत साक्ष्य विश्वसनीय, सुसंगत और स्वतंत्र रूप से पुष्ट (Corroborated) हों। न्यायालय अब ऐसे साक्ष्यों को अधिक महत्व दे रहे हैं जो वैज्ञानिक एवं तकनीकी आधार पर सत्यापित किए जा सकते हैं।

7. Scientific and Forensic Evidence का बढ़ता महत्व

आधुनिक न्यायिक प्रवृत्ति वैज्ञानिक एवं फोरेंसिक साक्ष्यों पर अधिक निर्भरता की ओर अग्रसर है। डीएनए रिपोर्ट, फिंगरप्रिंट विश्लेषण, सीसीटीवी फुटेज, मोबाइल डेटा, कॉल डिटेल रिकॉर्ड, इलेक्ट्रॉनिक संचार तथा अन्य डिजिटल रिकॉर्ड अब आपराधिक मुकदमों में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

न्यायालयों का मानना है कि वैज्ञानिक साक्ष्य मानवीय त्रुटियों तथा झूठी गवाही की संभावना को कम करते हैं और तथ्यात्मक सत्य तक पहुँचने में अधिक सहायता प्रदान करते हैं। परिणामस्वरूप, जांच एजेंसियों को वैज्ञानिक पद्धतियों का अधिकाधिक उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है।

8. Chain of Custody का महत्व

डिजिटल एवं वैज्ञानिक साक्ष्यों की स्वीकार्यता के लिए Chain of Custody अत्यंत महत्वपूर्ण मानी जा रही है। न्यायालय यह सुनिश्चित करना चाहते हैं कि साक्ष्य प्राप्त होने से लेकर न्यायालय में प्रस्तुत किए जाने तक उसकी सुरक्षा, संरक्षण तथा प्रामाणिकता बनी रहे।

यदि यह स्पष्ट न हो कि साक्ष्य किसने प्राप्त किया, किसने सुरक्षित रखा, किसने उसका परीक्षण किया और किस प्रकार उसे न्यायालय तक पहुँचाया गया, तो उसकी विश्वसनीयता पर प्रश्नचिह्न लग सकता है। इसलिए Chain of Custody का उचित अभिलेखीकरण (Documentation) आधुनिक आपराधिक मुकदमों का अनिवार्य अंग बन गया है।

9. Electronic Evidence की Authentication

BSA ने इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्यों को व्यापक मान्यता प्रदान की है, किन्तु न्यायालय उनकी प्रामाणिकता की कठोर जांच भी कर रहे हैं। न्यायालय यह सुनिश्चित करते हैं कि इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड वास्तविक हो, उसमें किसी प्रकार की छेड़छाड़ न हुई हो तथा उसकी उत्पत्ति और स्रोत का उचित सत्यापन उपलब्ध हो।

डिजिटल साक्ष्य के संदर्भ में Metadata, Device Information, Server Records तथा आवश्यक प्रमाणन (Certification) को महत्वपूर्ण माना जा रहा है। इससे न्यायालयों को यह सुनिश्चित करने में सहायता मिलती है कि प्रस्तुत इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड विश्वसनीय और न्यायिक उपयोग के योग्य है।

निष्कर्ष

नए आपराधिक कानूनों के संबंध में उभरती हुई न्यायिक प्रवृत्तियाँ यह दर्शाती हैं कि भारतीय न्यायपालिका दक्षता (Efficiency) और निष्पक्षता (Fairness) के बीच संतुलन स्थापित करना चाहती है। BNS, BNSS और BSA की व्याख्या केवल आधुनिक तकनीकी कानूनों के रूप में नहीं, बल्कि एक ऐसे अधिकार-आधारित आपराधिक न्याय ढाँचे (Rights-Based Criminal Justice Framework) के रूप में की जा रही है जो संविधान के मूल्यों की रक्षा करते हुए प्रभावी न्याय सुनिश्चित करे। न्यायालयों का स्पष्ट संदेश है कि त्वरित न्याय तभी सार्थक है जब वह निष्पक्ष प्रक्रिया, उच्च गुणवत्ता वाले साक्ष्य तथा संवैधानिक सुरक्षा उपायों के साथ प्रदान किया जाए।

5. Key Takeaways for Investigating Officers (IOs) and Prosecutors

प्रस्तावना

भारतीय न्याय संहिता (BNS), भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता (BNSS) तथा भारतीय साक्ष्य अधिनियम (BSA) के लागू होने के पश्चात आपराधिक न्याय प्रणाली में केवल दोषसिद्धि (Conviction) ही लक्ष्य नहीं रह गई है, बल्कि निष्पक्ष जांच (Fair Investigation), त्वरित विचारण (Speedy Trial) तथा उच्च गुणवत्ता वाले साक्ष्य (Quality Evidence) भी समान रूप से महत्वपूर्ण हो गए हैं। न्यायालयों द्वारा हाल के वर्षों में दिए गए निर्णय यह संकेत देते हैं कि भविष्य में सफल अभियोजन उन्हीं मामलों में संभव होगा जहाँ जांच एवं अभियोजन दोनों विधिक मानकों का पूर्ण पालन करें।

Arrest में Compliance-Based Approach

अवधारणा

वर्तमान न्यायिक दृष्टिकोण के अनुसार गिरफ्तारी पुलिस की शक्ति अवश्य है, किन्तु उसका प्रयोग विवेकपूर्ण एवं आवश्यकता-आधारित होना चाहिए। अनावश्यक गिरफ्तारी व्यक्ति की स्वतंत्रता एवं गरिमा का उल्लंघन करती है, जो संविधान के अनुच्छेद 21 द्वारा संरक्षित है।

इसलिए आज की आपराधिक न्याय प्रणाली में “Arrest First, Investigate Later” की बजाय “Investigate First, Arrest Only When Necessary” का सिद्धांत विकसित हो रहा है।

IO के लिए व्यावहारिक निर्देश

प्रत्येक मामले में गिरफ्तारी की आवश्यकता का स्वतंत्र मूल्यांकन किया जाए।

गिरफ्तारी के कारणों को लिखित रूप में दर्ज किया जाए।

आरोपी के फरार होने, साक्ष्य से छेड़छाड़ करने अथवा गवाहों को प्रभावित करने की संभावना का परीक्षण किया जाए।

जहाँ संभव हो, नोटिस ऑफ अपीयरेंस जारी कर जांच में सहयोग प्राप्त किया जाए।

गिरफ्तारी के समय सभी वैधानिक अधिकारों की जानकारी आरोपी को दी जाए।

न्यायिक महत्व

उच्चतम न्यायालय ने अनेक अवसरों पर स्पष्ट किया है कि गिरफ्तारी दंड का साधन नहीं है। यदि जांच बिना गिरफ्तारी के प्रभावी रूप से की जा सकती है, तो गिरफ्तारी से बचना चाहिए।

Presentation Point - कानून गिरफ्तारी की अनुमति देता है, लेकिन संविधान इसके लिए औचित्य की मांग करता है।

II. Adjournment Avoid करने की रणनीति

पृष्ठभूमि

भारतीय न्यायालयों में लंबित मामलों की बढ़ती संख्या का एक प्रमुख कारण अनावश्यक स्थगन (Unnecessary Adjournments) है। न्यायालय अब इस प्रवृत्ति को न्याय प्रशासन के लिए गंभीर बाधा मानते हैं।

त्वरित न्याय (Speedy Trial) केवल एक प्रशासनिक आवश्यकता नहीं, बल्कि अनुच्छेद 21 के अंतर्गत मौलिक अधिकार है।

IO की भूमिका

- समय पर जांच पूर्ण करना

यदि जांच अधूरी रहती है अथवा आवश्यक दस्तावेज समय पर उपलब्ध नहीं होते, तो विचारण में बार-बार स्थगन की आवश्यकता उत्पन्न होती है।

2. गवाहों की उपलब्धता सुनिश्चित करना

गवाहों से नियमित संपर्क बनाए रखना।

समन की तामील समय पर कराना।

संवेदनशील मामलों में गवाह संरक्षण उपायों का उपयोग करना।

3. वैज्ञानिक रिपोर्टों का समन्वय

FSL रिपोर्ट, मेडिकल रिपोर्ट तथा अन्य विशेषज्ञ रिपोर्ट समय पर प्राप्त करना आवश्यक है।

Prosecutor की भूमिका

1. Case Preparation

प्रत्येक तिथि से पूर्व अभियोजक को केस फाइल का गहन अध्ययन करना चाहिए ताकि सुनवाई के दौरान अनावश्यक समय नष्ट न हो।

2. Witness Management

गवाहों की परीक्षा के लिए सुनियोजित रणनीति तैयार करनी चाहिए।

3. Adjournment Culture समाप्त करना

केवल वास्तविक एवं अपरिहार्य परिस्थितियों में ही स्थगन का अनुरोध किया जाना चाहिए।

न्यायालयों की अपेक्षा

आज न्यायालय चाहते हैं कि अभियोजन और जांच एजेंसियाँ मुकदमे को केवल आगे बढ़ाने का कार्य न करें, बल्कि उसे समयबद्ध रूप से निष्कर्ष तक पहुँचाने का प्रयास करें।

Presentation Point

"हर अनावश्यक स्थगन न्याय में देरी करता है और न्याय व्यवस्था में जनता के विश्वास को कमजोर करता है।"

III. Evidence Handling में Standardization

बदलता हुआ परिदृश्य

डिजिटल युग में अपराधों की प्रकृति तेजी से बदल रही है। CCTV Footage, Mobile Data, Email Records, Social Media Chats, GPS Data तथा अन्य इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड अब आपराधिक मामलों में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

ऐसी स्थिति में साक्ष्य संग्रहण एवं संरक्षण की प्रक्रिया में एकरूपता (Standardization) अत्यंत आवश्यक हो गई है।

Chain of Custody का महत्व

Chain of Custody का अर्थ है कि साक्ष्य के संग्रहण से लेकर न्यायालय में प्रस्तुत किए जाने तक उसकी सम्पूर्ण यात्रा का रिकॉर्ड रखा जाए।

आवश्यकता - यदि साक्ष्य किसके पास कब रहा, इसका रिकॉर्ड नहीं है, तो उसकी विश्वसनीयता पर प्रश्नचिह्न लग सकता है।

लाभ

साक्ष्य की अखंडता सिद्ध होती है।

छेड़छाड़ के आरोपों से बचाव होता है।

न्यायालय में साक्ष्य की स्वीकार्यता बढ़ती है।

2. Digital Evidence Management

डिजिटल साक्ष्य अत्यंत संवेदनशील होते हैं क्योंकि इनमें परिवर्तन करना अपेक्षाकृत आसान होता है।

आवश्यक सावधानियाँ

मूल डाटा को सुरक्षित रखना।

Forensic Imaging का उपयोग करना।

Hash Value सुरक्षित रखना।

Metadata को संरक्षित रखना।

अधिकृत विशेषज्ञों द्वारा विश्लेषण कराना।

3. Documentation Standardisation

अनेक मामलों में जांच की गुणवत्ता कमजोर नहीं होती, बल्कि दस्तावेजीकरण की कमियों के कारण अभियोजन प्रभावित होता है।

इसलिए

Seizure Memo स्पष्ट होना चाहिए।

Case Diary नियमित रूप से लिखी जानी चाहिए।

प्रत्येक कार्रवाई का समय, स्थान एवं कारण दर्ज होना चाहिए।

डिजिटल रिकॉर्ड का उचित प्रमाणन कराया जाना चाहिए।

4. Forensic Integration

आधुनिक आपराधिक न्याय प्रणाली में वैज्ञानिक साक्ष्य अत्यंत महत्वपूर्ण हो चुके हैं।

IO को

घटनास्थल का वैज्ञानिक निरीक्षण कराना चाहिए।

FSL को नमूने शीघ्र भेजने चाहिए।

रिपोर्ट प्राप्त होने के बाद उसे अन्य साक्ष्यों के साथ समन्वित करना चाहिए।

Prosecutor को -

1. विशेषज्ञ गवाहों की प्रभावी परीक्षा करनी चाहिए।

2.वैज्ञानिक रिपोर्टों को न्यायालय के समक्ष सरल एवं स्पष्ट रूप में प्रस्तुत करना चाहिए।

समापन (Conclusion)

नवीन आपराधिक विधियों के युग में सफल अभियोजन का आधार केवल अपराधी की पहचान नहीं, बल्कि कानूनसम्मत गिरफ्तारी (Lawful Arrest), समयबद्ध विचारण (Speedy Trial) और विश्वसनीय साक्ष्य (Reliable Evidence) है।

आज न्यायालय जांच एजेंसियों और अभियोजकों से केवल तकनीकी अनुपालन की अपेक्षा नहीं करते, बल्कि निष्पक्षता, पारदर्शिता, जवाबदेही और पेशेवर दक्षता की भी अपेक्षा करते हैं। इसलिए प्रत्येक Investigating Officer और Prosecutor को यह समझना होगा कि यही आधुनिक आपराधिक न्याय प्रणाली की मूल दिशा और न्यायालयों का स्पष्ट संदेश है।

1. ARREST (गिरफ्तारी) पर 5 महत्वपूर्ण सुप्रीम कोर्ट निर्णय

1. Arnesh Kumar v. State of Bihar

सिद्धांत

- गिरफ्तारी स्वचालित नहीं है।
- पुलिस को गिरफ्तारी के कारण लिखित रूप में दर्ज करने होंगे।
- मजिस्ट्रेट को भी संतुष्ट होना होगा कि गिरफ्तारी वैध है।

अभियोजन अधिकारी के लिए

- Arrest Memo जांचें।
- Reasons of Arrest रिकॉर्ड हैं या नहीं।
- Mechanical arrest का विरोध करें।

---

2. Satender Kumar Antil v. CBI

सिद्धांत

- Bail Rule, Jail Exception.
- 7 वर्ष तक के दण्ड वाले मामलों में पहले नोटिस।
- BNSS की धारा 35(3) के अंतर्गत नोटिस जारी करना आवश्यक बताया गया।

अभियोजन के लिए

- देखें कि IO ने नोटिस दिया या नहीं।
- गिरफ्तारी की वास्तविक आवश्यकता थी या नहीं।

---

3. Joginder Kumar v. State of U.P.

सिद्धांत

- केवल गिरफ्तारी का अधिकार होना पर्याप्त नहीं।
- गिरफ्तारी की आवश्यकता भी सिद्ध होनी चाहिए।

अभियोजन हेतु

- Case diary में arrest necessity अवश्य हो।

---

4. D.K. Basu v. State of West Bengal

सिद्धांत

- Arrest Memo
- Relative information
- Medical examination
- Custody transparency

आज भी गिरफ्तारी संबंधी सभी मामलों का आधारभूत निर्णय माना जाता है।

अभियोजन हेतु

Custodial violation वाले मामलों में विशेष सतर्कता।

---

5. Written Grounds of Arrest Cases (2024-25 Series)

सिद्धांत

Supreme Court ने हाल के निर्णयों में कहा कि जहाँ कानून अपेक्षा करता है वहाँ गिरफ्तारी के आधार लिखित रूप से उपलब्ध कराए जाने चाहिए, अन्यथा गिरफ्तारी अवैध हो सकती है।

अभियोजन हेतु

- Grounds of Arrest
- Communication to accused
- Arrest legality

इन तीनों को रिकॉर्ड में सुनिश्चित करें।

2. ADJOURNMENT & SPEEDY TRIAL पर 5 महत्वपूर्ण निर्णय

1. Hussainara Khatoon v. State of Bihar

सिद्धांत

- Speedy Trial Article 21 का हिस्सा है।

अभियोजन हेतु

- अनावश्यक स्थगन संवैधानिक अधिकार का उल्लंघन बन सकता है।

---

2. A.R. Antulay v. R.S. Nayak

सिद्धांत

- Trial Delay के मूल्यांकन हेतु मापदंड निर्धारित।

अभियोजन हेतु

- लंबित मामलों की समय-समय पर समीक्षा।

---

3. Ramanpreet Kaur v. State of Punjab

सिद्धांत

Supreme Court ने कहा कि Speedy Trial और Early Disposal आपराधिक न्यायशास्त्र का मूल तत्व हैं। अभियुक्त को अनिश्चितकाल तक मुकदमे में नहीं रखा जा सकता।

अभियोजन हेतु

- Witness management
- Summons monitoring
- Evidence readiness

---

4. Right to Speedy Trial Bail Cases (2025-26)

सिद्धांत

Supreme Court ने कहा कि अपराध कितना भी गंभीर हो, यदि Speedy Trial का अधिकार प्रभावित हो रहा है तो बेल पर विचार करना होगा।

अभियोजन हेतु

Delay के लिए जिम्मेदार पक्ष का रिकॉर्ड रखें।

---

5. Supreme Court Directions Against Judicial Delays (2026)

सिद्धांत

Supreme Court ने Article 142 का उपयोग करते हुए लंबित निर्णयों और न्यायिक विलंब को कम करने हेतु दिशा-निर्देश जारी किए।

अभियोजन हेतु

- केस मॉनिटरिंग सिस्टम
- Trial Calendar
- Witness Tracking

3. EVIDENCE INTERPRETATION एवं DIGITAL EVIDENCE पर 5 महत्वपूर्ण निर्णय

1. Arjun Panditrao Khotkar v. Kailash Kushanrao Gorantyal

सिद्धांत

- Electronic Evidence के लिए प्रमाणन (Certificate) अत्यंत महत्वपूर्ण।

अभियोजन हेतु

- Section 63 BSA Certificate अवश्य प्राप्त करें।

---

2. Anvar P.V. v. P.K. Basheer

सिद्धांत

- Electronic records को विशेष नियमों के अधीन सिद्ध करना होगा।

अभियोजन हेतु

- CD, CCTV, WhatsApp Chat को सीधे प्रस्तुत करना पर्याप्त नहीं।

---

3. Tomaso Bruno v. State of U.P.

सिद्धांत

- उपलब्ध CCTV या इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड प्रस्तुत न करने पर प्रतिकूल अनुमान लगाया जा सकता है।

अभियोजन हेतु

- Available digital evidence अवश्य जुटाएँ।

---

4. Section 63 BSA (Hash Value & Electronic Evidence) Case

सिद्धांत

- Supreme Court ने BSA की इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य संबंधी कठोर आवश्यकताओं को बरकरार रखा तथा Hash Value आधारित सत्यापन की महत्ता स्वीकार की।

अभियोजन हेतु

- Hash Value
- Forensic Imaging
- Metadata Preservation

पर विशेष ध्यान।

---

5. Recent Electronic Evidence Jurisprudence (2025-26)

सिद्धांत

- यदि इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड प्रस्तुत करने वाला व्यक्ति मूल डिवाइस के नियंत्रण में नहीं है तो न्यायालय व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाएगा; फिर भी प्रमाणिकता और Chain of Custody आवश्यक रहेगी।

अभियोजन हेतु

- Device ownership और custody रिकॉर्ड बनाए रखें।

4. CONTRADICTIONS & APPRECIATION OF EVIDENCE पर 5 महत्वपूर्ण निर्णय

1. State of U.P. v. M.K. Anthony

सिद्धांत

- छोटे विरोधाभास स्वाभाविक हैं।

अभियोजन हेतु

- Minor discrepancies को बढ़ा-चढ़ाकर न देखें।

---

2. Leela Ram v. State of Haryana

सिद्धांत

- पूरी गवाही को समग्र रूप से पढ़ना होगा।

---

3. Shivaji Sahabrao Bobade v. State of Maharashtra

सिद्धांत

- न्यायालय वास्तविकता आधारित दृष्टिकोण अपनाएगा।

---

4. Recent SC Decision on Vague Allegations (2026)

सिद्धांत

- Supreme Court ने कहा कि अस्पष्ट एवं सामूहिक आरोपों के आधार पर मुकदमा नहीं चल सकता। प्रत्येक आरोपी के विरुद्ध विशिष्ट सामग्री होनी चाहिए।

अभियोजन हेतु

- Role attribution स्पष्ट रखें।

---

5. Rammi v. State of M.P.

सिद्धांत

- मानवीय स्मृति के कारण छोटे अंतर स्वाभाविक हैं।

5. NEW CRIMINAL LAWS (BNS-BNSS-BSA) पर 5 प्रमुख Judicial Trends

1. Satender Kumar Antil (BNSS Notice Jurisprudence)

- धारा 35(3) BNSS के अंतर्गत नोटिस की अनिवार्यता पर बल।

---

2. Arrest Reason Recording Cases

- गिरफ्तारी के कारणों को रिकॉर्ड करना आवश्यक।

---

3. Electronic Evidence Compliance Cases

- Hash Value, Certificate एवं Digital Authenticity पर बढ़ता न्यायिक जोर।

---

4. Speedy Trial Jurisprudence Expansion

- Article 21 आधारित त्वरित सुनवाई को और मजबूत किया गया।

---

5. Accountability of Investigation

- Supreme Court लगातार यह कह रहा है कि जांच निष्पक्ष, कारणयुक्त और दस्तावेज आधारित होनी चाहिए; अस्पष्ट आरोपों पर अभियोजन नहीं चल सकता।

प्रशिक्षण निष्कर्ष

Arrest	Speedy Trial	Electronic Evidence	Contradictions	New Laws
Arnesh Kumar	Hussainara Khatoon	Anvar P.V.	M.K. Anthony	Satender Kumar Antil
Satender Kumar Antil	A.R. Antulay	Arjun Panditrao	Leela Ram	BNSS Notice Cases
Joginder Kumar	Ramanpreet Kaur	Tomaso Bruno	Shivaji Bobade	Arrest Reason Cases
D.K. Basu	Right to Speedy Trial Bail Cases	BSA Section 63 Cases	Rammi	Digital Evidence Cases
Written Grounds of Arrest	Article 142 Delay Directions	Chain of Custody Cases	Vague Allegation Case	Investigation Accountability

विषय-1 : Arrest (गिरफ्तारी) पर नवीन न्यायिक दृष्टिकोण

प्रस्तावना

नए आपराधिक कानूनों के लागू होने के बाद गिरफ्तारी को दंडात्मक नहीं बल्कि **कानूनी आवश्यकता आधारित प्रक्रिया** माना गया है। न्यायालयों ने बार-बार कहा है कि "Arrest is not mandatory, it must be justified."

1. BNSS के अंतर्गत गिरफ्तारी के मानदण्ड

गिरफ्तारी का उद्देश्य

- अभियुक्त की उपस्थिति सुनिश्चित करना
- साक्ष्य से छेड़छाड़ रोकना
- गवाहों को प्रभावित होने से बचाना
- अपराध की पुनरावृत्ति रोकना
- जांच में सहयोग सुनिश्चित करना

गिरफ्तारी अंतिम विकल्प

जांच अधिकारी को पहले विचार करना चाहिए–

- क्या नोटिस देकर बुलाया जा सकता है?
- क्या अभियुक्त सहयोग कर रहा है?
- क्या फरार होने की संभावना है?
- क्या साक्ष्य प्रभावित होने का खतरा है?

यदि इनका उत्तर "नहीं" है तो तत्काल गिरफ्तारी उचित नहीं होगी।

2. अनावश्यक गिरफ्तारी पर सुप्रीम कोर्ट के निर्देश

प्रमुख निर्णय

1. Arnesh Kumar Vs State of Bihar

सिद्धांत:

- गिरफ्तारी स्वचालित नहीं हो सकती।
- पुलिस को गिरफ्तारी के कारण लिखित रूप में दर्ज करने होंगे।
- मजिस्ट्रेट को भी गिरफ्तारी की वैधता जांचनी होगी।

अभियोजन अधिकारी की भूमिका

चार्जशीट प्रस्तुत करते समय देखें–

- गिरफ्तारी का कारण रिकॉर्ड है या नहीं।
- केस डायरी में पर्याप्त आधार है या नहीं।
- गिरफ्तारी केवल औपचारिकता तो नहीं थी।

2. Satender Kumar Antil Vs CBI

सिद्धांत:

- बेल नियम है, जेल अपवाद।
- जांच में सहयोग करने वाले अभियुक्तों की अनावश्यक गिरफ्तारी से बचें।

अभियोजन दृष्टिकोण

- केवल "गंभीर अपराध" कहना पर्याप्त नहीं।
- अभियुक्त के व्यवहार और जांच की आवश्यकता पर जोर दें।

3. Notice of Appearance बनाम तत्काल गिरफ्तारी

नोटिस की अवधारणा

कम गंभीर मामलों में पुलिस पहले नोटिस जारी करेगी।

नोटिस मिलने पर अभियुक्त:

- जांच में उपस्थित हो
- दस्तावेज उपलब्ध कराए
- सहयोग करे

तो गिरफ्तारी की आवश्यकता नहीं।

कब गिरफ्तारी उचित होगी?

यदि–

- नोटिस का पालन नहीं करता
- फरार हो जाता है
- साक्ष्य मिटाने का प्रयास करता है
- गवाहों को धमकाता है

4. Investigating Officer (IO) की जिम्मेदारी

Recording of Reasons

IO को लिखना होगा–

- गिरफ्तारी क्यों आवश्यक है?
- कम कठोर विकल्प क्यों पर्याप्त नहीं थे?
- किस आधार पर गिरफ्तारी की गई?

अभियोजन अधिकारी को जांचना चाहिए

✓ केस डायरी

✓ गिरफ्तारी मेमो

✓ नोटिस की प्रतियां

✓ गिरफ्तारी के कारण

✓ स्वतंत्र गवाह

विषय-2 : Adjournment (स्थगन) पर न्यायालयीन नियंत्रण

प्रस्तावना

न्यायालयों ने माना है कि बार-बार स्थगन न्याय व्यवस्था की सबसे बड़ी समस्या है। "Justice delayed is Justice denied."

1. अनावश्यक स्थगन पर न्यायालयों की सख्ती

सामान्य कारण

- गवाह अनुपस्थित
- केस डायरी नहीं
- FSL रिपोर्ट लंबित
- अभियोजन तैयार नहीं
- अधिवक्ता अनुपस्थित

न्यायालय की अपेक्षा

- हर तारीख पर सार्थक कार्यवाही
- अनावश्यक स्थगन न मांगना
- तैयारी के साथ उपस्थित होना

2. Speedy Trial का सिद्धांत

संवैधानिक आधार

अनुच्छेद 21 के अंतर्गत त्वरित सुनवाई मौलिक अधिकार है।

अभियोजन अधिकारी की जिम्मेदारी

- गवाह समय पर बुलाना
- समन तामील सुनिश्चित करना
- FSL रिपोर्ट समय पर प्राप्त करना
- केस की नियमित मॉनिटरिंग

3. अभियोजन एवं बचाव पक्ष की जिम्मेदारी

अभियोजन

- साक्ष्य तैयार रखना
- गवाहों की उपस्थिति सुनिश्चित करना
- दस्तावेज व्यवस्थित रखना

बचाव पक्ष

- अनावश्यक स्थगन न लेना
- जिरह समय पर करना

स्थगन कम करने की रणनीति

Checklist

- Witness Calendar
- Digital Reminder
- Police Coordination
- FSL Tracking
- Daily Cause Review

विषय-3 : Evidence Interpretation (साक्ष्य की व्याख्या)

आधुनिक दृष्टिकोण

अब न्यायालय केवल पारंपरिक साक्ष्य नहीं बल्कि डिजिटल साक्ष्य को भी महत्वपूर्ण मानते हैं।

---

1. BSA के अंतर्गत डिजिटल एवं इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य

डिजिटल साक्ष्य के उदाहरण

- मोबाइल डेटा
- WhatsApp Chat
- Email
- CCTV Footage
- Call Detail Records
- GPS Data
- Social Media Posts

डिजिटल साक्ष्य की विशेषताएं

Authenticity

साक्ष्य वास्तविक है?

Integrity

क्या इसमें छेड़छाड़ हुई?

Reliability

क्या स्रोत विश्वसनीय है?

अभियोजन अधिकारी को क्या देखना चाहिए?

- Source Device
- Extraction Report
- Hash Value
- Forensic Examination
- Certification

---

2. Admissibility एवं Reliability पर नवीन निर्णय

Admissibility

साक्ष्य न्यायालय में स्वीकार्य है या नहीं।

जांच बिंदु

- कानूनी रूप से प्राप्त हुआ?
- उचित प्रमाणन है?
- Chain of Custody सुरक्षित है?

Reliability

साक्ष्य भरोसेमंद है या नहीं।

न्यायालय देखता है–

- स्रोत
- निरंतरता
- स्वतंत्र समर्थन

3. Chain of Custody

अर्थ - जब्ती से लेकर न्यायालय में पेश करने तक साक्ष्य का पूरा रिकॉर्ड।

Chain में शामिल चरण

1. Seizure
2. Sealing
3. Storage
4. Transportation
5. FSL Examination
6. Court Production

अभियोजन अधिकारी का ध्यान

- हर चरण का रिकॉर्ड उपलब्ध होना चाहिए।
- यदि कोई लिंक टूटता है तो साक्ष्य की विश्वसनीयता प्रभावित हो सकती है।

4. Certification

विशेष रूप से डिजिटल साक्ष्य में–

- प्रमाण पत्र
- Forensic Report
- Device Details

महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

5. Contradiction Handling

विरोधाभास का मूल्यांकन

Minor Contradictions

- समय में थोड़ा अंतर
- दूरी का अनुमान
- छोटे तथ्यात्मक अंतर

ये सामान्य हैं।

Material Contradictions

- घटना का तरीका बदल जाना
- आरोपी की पहचान बदलना
- घटना स्थल बदलना

ये गंभीर हैं।

विषय-4 : New Criminal Laws पर Judicial Trends

BNS, BNSS एवं BSA का व्यावहारिक प्रभाव

न्यायालय अब निम्न बातों पर अधिक जोर दे रहे हैं–

Procedural Fairness

- निष्पक्ष जांच
- गिरफ्तारी का औचित्य
- आरोपी के अधिकार

Evidence Quality

केवल मात्रा नहीं बल्कि गुणवत्ता महत्वपूर्ण है।

न्यायालय पूछ रहे हैं–

- डिजिटल साक्ष्य कितना विश्वसनीय है?
- जांच कितनी निष्पक्ष है?
- Chain of Custody सुरक्षित है?

उभरते हुए न्यायिक रुझान

1. Rights Based Criminal Justice

- मानवाधिकार संरक्षण
- अनावश्यक गिरफ्तारी से बचाव

2. Technology Based Evidence

- CCTV
- Mobile Forensics
- Digital Records

3. Accountability of Investigation

जांच अधिकारी से विस्तृत कारण अपेक्षित।

विषय-5 : Key Takeaways for IOs & Prosecutors

Arrest में Compliance Based Approach

Do's

✓ कारण रिकॉर्ड करें

✓ नोटिस को प्राथमिकता दें

✓ गिरफ्तारी को उचित ठहराएं

✓ केस डायरी अपडेट रखें

Don'ts

✗ Routine Arrest

✗ Mechanical Arrest

✗ बिना कारण गिरफ्तारी

Adjournment Avoid करने की रणनीति

Pre-Trial Planning

- Witness Matrix
- Evidence Index
- FSL Follow-up
- Digital Tracking

Evidence Handling में Standardization

Standard Protocol

1. Proper Seizure
2. Sealing
3. Documentation
4. Chain of Custody
5. Forensic Verification
6. Court Presentation

अभियोजन अधिकारियों हेतु अंतिम संदेश

नए आपराधिक कानूनों का मूल उद्देश्य केवल दोषसिद्धि (Conviction) नहीं, बल्कि **निष्पक्ष, पारदर्शी और अधिकार-सम्मत आपराधिक न्याय प्रणाली** स्थापित करना है।

एक सफल अभियोजन अधिकारी वह है जो–

- कानूनी प्रक्रिया का पालन कराए,
- जांच की गुणवत्ता सुनिश्चित करे,
- गवाहों का प्रभावी प्रबंधन करे,
- डिजिटल साक्ष्य को समझे,
- और न्यायालय को विश्वसनीय एवं वैधानिक साक्ष्य प्रस्तुत करे।

मंत्र:

"Fair Investigation + Quality Evidence + Speedy Trial = Effective Prosecution".

1. Digital/Electronic Evidence की स्वीकार्यता (Admissibility)

Arjun Panditrao Khotkar v. Kailash Kushanrao Gorantyal

- सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट किया कि इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड (CDR, CCTV, वीडियो, ऑडियो आदि) को साक्ष्य के रूप में स्वीकार करने के लिए धारा 65B का प्रमाणपत्र आवश्यक है।
- बिना 65B प्रमाणपत्र के इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य सामान्यतः ग्राह्य नहीं होगा।

सिद्धांत: Electronic evidence की admissibility के लिए वैधानिक प्रक्रिया का पालन अनिवार्य है।

---

2. Reliability of Electronic Evidence

P.V. Anvar v. P.K. Basheer

- न्यायालय ने कहा कि इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड एक स्वतंत्र साक्ष्य श्रेणी है।
- इसकी विश्वसनीयता (reliability) तकनीकी प्रमाणन और स्रोत की प्रामाणिकता पर निर्भर करती है।

सिद्धांत: इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य की विश्वसनीयता मौखिक साक्ष्य से अधिक प्रभावशाली हो सकती है।

इसके अतिरिक्त, इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य की Chain of Custody का संरक्षण अत्यंत आवश्यक है। इसका तात्पर्य साक्ष्य के संग्रहण, संरक्षण, स्थानांतरण एवं न्यायालय में प्रस्तुत किए जाने तक की सम्पूर्ण प्रक्रिया का अभिलेखन है। यदि इस प्रक्रिया में किसी प्रकार की कमी या छेड़छाड़ की संभावना पाई जाती है, तो साक्ष्य की विश्वसनीयता प्रभावित हो सकती है।

इस प्रकार आधुनिक न्यायिक व्यवस्था में साक्ष्य की व्याख्या केवल पारंपरिक सिद्धांतों तक सीमित नहीं रह गई है, बल्कि तकनीकी एवं वैज्ञानिक प्रगति के अनुरूप विकसित हो रही है। न्यायालय का उद्देश्य उपलब्ध सभी प्रकार के साक्ष्यों का समन्वित मूल्यांकन कर वास्तविक सत्य तक पहुँचना और न्याय सुनिश्चित करना है।

ARTICLES

A Judgment On Electronic Evidence

Justice Narayana Pisharadi

07:33 PM, 04 June 2026

Listen to this Article

00:00/00:00

The lynching of a mentally challenged tribal youth in Kerala, a few years back, by a group of people had shocked the conscience of the society. Recently, the High Court of Kerala has rendered its verdict in the case, in the appeals preferred by the convicted accused as well as the appeals filed by the State of Kerala and the mother of the deceased.[1] This judgment provides an interesting study material on electronic evidence. It is a case where the fate of the prosecution, to a great extent, hinged on electronic evidence rather than on oral evidence. How electronic evidence has played a prominent role in determining the guilt of the accused in the case is portrayed by the High Court in the following words:

5. Chain of Custody

Tomaso Bruno v. State of Uttar Pradesh

- न्यायालय ने कहा कि इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड की सुरक्षा, संग्रहण और प्रस्तुतिकरण की प्रक्रिया (Chain of Custody) अत्यंत महत्वपूर्ण है।
- यदि रिकॉर्ड के साथ छेड़छाड़ की संभावना हो, तो उसकी विश्वसनीयता प्रभावित हो सकती है।

सिद्धांत: इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य की अखंडता (integrity) बनाए रखना आवश्यक है।

---

6. Contradiction Handling

- हाल के निर्णयों में न्यायालयों ने माना है कि यदि विश्वसनीय इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य उपलब्ध हो, तो मौखिक गवाही में मामूली विरोधाभास (minor contradictions) अभियोजन के मामले को कमजोर नहीं करते।
- वैज्ञानिक एवं डिजिटल साक्ष्य को अधिक वस्तुनिष्ठ (objective) माना जाता है।

3. CCTV/Video Footage और Conviction

State of Kerala v. Mahin Alias Vishnu

- न्यायालय ने माना कि विधिवत प्रमाणित CCTV फुटेज एवं अन्य इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य दोषसिद्धि (conviction) का आधार बन सकते हैं।
- प्रत्येक व्यक्ति का गवाह बनकर वीडियो की सामग्री बताना आवश्यक नहीं है।
- यदि धारा 65B की आवश्यकताएँ पूरी हैं, तो न्यायालय वीडियो देखकर उचित निष्कर्ष निकाल सकता है।

सिद्धांत: विश्वसनीय इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य, कमजोर मौखिक गवाही की कमी को पूरा कर सकते हैं।

---

4. Call Detail Records (CDR)

Sonu @ Amar v. State of Haryana

- CDR वैज्ञानिक साक्ष्य (scientific evidence) माना गया।
- यह किसी व्यक्ति की लोकेशन, संपर्क और घटनास्थल से संबंध स्थापित करने में सहायक होता है।

सिद्धांत: CDR परिस्थितिजन्य साक्ष्य को मजबूत करने वाला महत्वपूर्ण इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य है।

"Forest officials, shop employees, roadside traders, and local residents appeared before the court, watched the CCTV footage in open court, pleaded ignorance when their images and videos came up on the screen and claimed inability to identify the persons involved. .... This case also demonstrates, perhaps more clearly than any recent case before this Court, ***the profound importance of electronic evidence in the administration of criminal justice***. Ultimately, the truth regarding what transpired on 22.02.2018 was not preserved by human testimony. It survived because of three CCTV cameras, six mobile phones, a GPS chip embedded in a Xiaomi Mi A1 mobile phone, call detail records stored on servers in Pune, and the forensic analysis undertaken by Government scientists who painstakingly examined those devices.........***such electronic evidence is admissible, inherently reliable in its essential nature, and capable of sustaining conviction even in the absence of dependable oral testimony***. That principle proved decisive in the present case. Without such evidence, several convicted accused would almost certainly have escaped criminal liability, aided

the Indian Evidence Act lays down that, in the absence of such notification, the opinion of a qualified scientific expert or the report issued by a Government Forensic Laboratory becomes inadmissible in evidence. No such exclusionary bar is contemplated either under the Information Technology Act or under the Evidence Act. In the absence of a specific statutory prohibition, the Court cannot read into Section 79A of the Information Technology Act a consequence that has not been expressly provided by the legislature.

The High Court has further held that, Section 293 of the Code of Criminal Procedure independently governs the admissibility and evidentiary use of reports issued by Government Scientific Experts. The provision specifically recognises reports issued by Directors, Deputy Directors, and Assistant Directors of Central and State Forensic Science Laboratories as admissible evidence in criminal proceedings. Section 293 of the Code does not make such admissibility conditional upon a notification under Section 79A of the Information Technology Act.

by the silence of those who witnessed the incident and chose not to disclose the truth".

It would be advantageous here to examine how the High Court has dealt with the legal issues relating to the electronic evidence which was produced in the case by the prosecution to prove the guilt of the accused.

Absence of Notification Under Section 79A of the Information Technology Act

One of the principal contentions advanced by the accused in the case was that the electronic and digital evidence relied upon by the prosecution was inadmissible on the ground that scientific examination of such evidence was conducted not by an Examiner of Electronic Evidence notified under Section 79A of the Information Technology Act, 2000. The forensic analysis of the electronic evidence in the case was conducted in the State Forensic Science Laboratory, Thiruvananthapuram, which was then not notified as an Examiner of Electronic Evidence under Section 79A of the Information Technology Act. The reports submitted by the experts of the State Forensic Science Laboratory on electronic evidence

the person shown in the reference photograph was the accused concerned.

The expert at the Forensic Science Laboratory extracted the relevant video footages from all seized devices which included CCTV and mobile phones and then he compared the faces visible in the video footages with the photographs of the accused and identified the individuals who appeared in each file with the time of his appearance. The report of the expert contained the details of the forensic comparison thus conducted by him.

When the CCTV video footage was displayed in the court during the trial, a witness, who was a resident of the locality, who had known the accused for several years prior to the incident, identified the accused who were visible in the video footage by name. He also identified the accused persons in the court. The High Court has remarked that his identification was not that of a stranger but of a local resident recognising individuals he already knew and it was grounded in familiarity and personal knowledge.

The High Court rejected the contention raised by the accused, by holding that "***once the Court is satisfied that the evidence is relevant and has been produced through a competent scientific expert, its admissibility cannot be rejected merely on the ground that the laboratory had not been separately notified under Section 79A of the Information Technology Act***". The High Court, ultimately, held that the absence of notification under Section 79A of the Information Technology Act does not render the electronic and digital evidence inadmissible, nor does it vitiate the reports issued by the State Forensic Science Laboratory.

Even earlier, the High Court of Kerala had taken the same view with regard to admissibility of the report of an expert on electronic evidence in the absence of notification under Section 79A of the Information Technology Act.[2] The Allahabad High Court has also taken more or less a similar view in this regard.[3]

Modern perspectives in criminal investigation, by the integration of scientific and electronic techniques with the traditional investigation methods, ensure not only efficiency in the investigation but also transparency and accountability in that process. With the increasing impact of technology in everyday life, in the coming years, in most of the cases dealing with grave offences, the prosecution as well as the defence would be relying upon electronic evidence to establish their own versions. The practice of relying upon the memory of witnesses would give way to reliance upon scientific as well as electronic evidence.

The Bharatiya Nagarik Suraksha Sanhita has introduced use of technology at all stages, from the registration of cases and crime scene visit to the completion of the trial of a case. A significant move has been made by the integration of technology and forensic science into investigations, aiming at modernizing the criminal justice system in the country, so as to ensure improvement in the quality of evidence, thereby safeguarding the rights of both the accused and the victims. The Bharatiya

References:

1. 2026 LiveLaw (Ker) 286.
2. Anu Shanthi v. State of Kerala: 2024 SCC OnLine Ker 2352 and Shadanandhan v. State of Kerala: 2025 SCC OnLine Ker 14058.
3. Shyam Sunder Prasad v. Central Bureau of Investigation: 2022 LiveLaw (AB) 280
4. Pune Bar Association v. Union of India: 2026 LiveLaw (SC) 551.
5. Kailas v. State of Maharashtra: 2025 LiveLaw (SC) 914
6. Gajraj v. State: (2011) 10 SCC 675.
7. Pune Bar Association v. Union of India: 2026 LiveLaw (SC) 551.

Sakshya Adhiniyam also contains special provisions regarding electronic and digital records and evidence. Section 57 of the Bharatiya Sakshya Adhiniyam contains special provisions, providing the circumstances under which electronic or digital record could be treated as primary evidence.

The law on electronic evidence is still at its nascent stage in our country. There are only a very few judgments of the constitutional courts which offer a lucid exposition of the law on electronic evidence. Most of the judicial officers in the district judiciary find it very difficult to comprehend even the fundamentals of the law on this topic. Viewed in such context, the judgment of the High Court (which explains how the contents of video footages can be proved in the court and how electronic evidence could be used to establish the identity of the persons involved in an incident), offers an opportunity to the students of law and also the experts in the field to ponder over the principles stated therein and to contribute to the development of law on electronic evidence.

The High Court finally concluded that the prosecution could conclusively establish, through reliable, cogent, and legally admissible electronic evidence, the identity and presence of each of the accused as reflected in the various electronic records produced before the Court. The High Court observed that the electronic evidence produced in the case was authentic and corroborative in nature, mutually consistent and free from any material contradiction or infirmity and the prosecution could successfully prove the identity of each of the accused appearing in the electronic evidence beyond reasonable doubt.

Conclusion

With advancement of technology, digital space has encroached on all spheres of human life. Consequently, evidence in the form of electronic record has become commonplace in all litigation. Physical documents are increasingly replaced with digital records like electronic mails, audio-visual clips etc.[7]

While dealing with the aforesaid contention, the High Court referred to Section 22A of the Evidence Act, which provides that oral admissions about the contents of electronic records are not relevant unless the genuineness of the record itself is in question. The High Court has held that the contents of an electronic record do not require oral proof and the document speaks for itself and oral narration of its contents is unnecessary unless its authenticity is challenged.

The High Court has further held that, the law does not envisage or require a Nodal Officer to peruse the voluminous call data records and read out each call entry. Once the CDR is proved as genuine, its contents stand on their own. The role of the Nodal Officer is to establish the authenticity of the document and not to narrate what the document has already recorded.

In addition to the above, the trial court undertook its own visual assessment. The High Court says that, by viewing the footage and comparing it with the accused persons who were present in the court, the trial court performed its judicial function of evaluating the evidence before it and that it was not an act of expert analysis but a direct observation that served to confirm the consistency of the other evidence.

Ultimately, the High Court has held that, the aforesaid four layers, taken together, formed a coherent and mutually reinforcing framework and they would lead to a single conclusion: the individuals seen in the footage were the accused before the court. The High Court also observed that, the said conclusion does not depend on any single piece of evidence but arises from the convergence of multiple independent sources, making any alternative explanation untenable.

<u>No Need of Narration of the Contents of the Video in the Court</u>

Relying upon a recent decision of the Supreme Court,[5] the High Court has also held that, once the requirement of Section 65B of the Evidence Act is fulfilled, the video, which is an electronic record becomes an admissible piece of evidence, like a document and it can be seen by the Court to enable it to draw appropriate inferences. It is not the requirement of law that the contents of the video would become admissible only if it is reduced to a transcript in the words of a witness who created the video or is noticed in the video. There is no requirement of each person visible in the footage to step into the witness box and narrate in his own words what is being shown in the video.

Identification of the Accused in Video Footages

The defence had raised a contention in the case that reliance placed by the prosecution upon the video footages retrieved from the CCTV and the mobile phones will not advance its case when none of the prosecution witnesses had identified the accused with precision and spoken about their presence or involvement. In other words, the plea was that the digital footage will not by itself establish the identity of the individuals involved in the incident. However, the High Court adopted the view that the prosecution had managed to establish the connection between the crime and the accused through three independent modes.

A photographer took the photographs of each accused after their arrest. The printed photographs and the compact disc containing them, along with the certificate under Section 65B of the Evidence Act, were proved through the examination of the photographer concerned. These photographs served as the reference standard and it was established that

Proof of Call Data Records

Call data records of a mobile phone constitute scientific evidence. The Supreme Court has taken the view that such evidence is of a conclusive nature and even a serious discrepancy in oral evidence would have to yield to such scientific evidence.[6]

The defence had raised a contention that the Call Data Records (CDR) and Customer Application Forms (CAF) cannot be relied upon because the Nodal Officers had not deposed before the trial court that such and such calls were made from such and such mobile phones. It was contended that, unless the Nodal Officers explicitly state in the court that particular individuals had made specific calls to particular numbers, the CDR could not be considered.

In this context, it is to be noted that, the Supreme Court has recently observed that, when the two sub-sections of Section 39 of the Bharatiya Sakshya Adhiniyam are read harmoniously, it is possible to hold, in addition to entities notified as Examiner of Electronic Evidence under Section 79A of the Information Technology Act, if the Court is satisfied, on the basis of unimpeachable material, that any other person has special skill and expertise in computer science and cyber forensics, opinion of such person may be held relevant as an expert with regard to electronic/digital record.[4]

साक्ष्य की व्याख्या (Evidence Interpretation) : आधुनिक दृष्टिकोण

साक्ष्य की व्याख्या से आशय न्यायालय द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों का परीक्षण, मूल्यांकन एवं विश्लेषण करके सत्य का निर्धारण करने की प्रक्रिया से है। परंपरागत रूप से न्यायालय मुख्यतः मौखिक एवं दस्तावेजी साक्ष्यों पर निर्भर रहते थे, किन्तु तकनीकी विकास के साथ डिजिटल एवं इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य भी न्यायिक प्रक्रिया का महत्वपूर्ण अंग बन गए हैं। वर्तमान में CCTV फुटेज, कॉल डिटेल रिकॉर्ड (CDR), मोबाइल डेटा, ई-मेल, सोशल मीडिया संदेश तथा अन्य इलेक्ट्रॉनिक अभिलेख अपराध की जांच एवं अभियोजन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 (BSA) ने इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्यों को स्पष्ट रूप से मान्यता प्रदान की है। न्यायालय अब केवल साक्ष्य की ग्राह्यता (admissibility) पर ही नहीं, बल्कि उसकी विश्वसनीयता (reliability), प्रामाणिकता (authenticity) तथा अखंडता (integrity) पर भी विशेष ध्यान देते हैं। इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य की स्वीकार्यता के लिए विधि द्वारा निर्धारित प्रमाणन (certification) तथा अन्य आवश्यक प्रक्रियाओं का पालन अनिवार्य माना गया है।

आधुनिक न्यायिक दृष्टिकोण के अनुसार यदि इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य विधिसम्मत रूप से प्राप्त एवं प्रमाणित हो, तो वह अत्यंत विश्वसनीय साक्ष्य माना जा सकता है। कई मामलों में न्यायालयों ने यह स्वीकार किया है कि वैज्ञानिक एवं डिजिटल साक्ष्य, मानवीय स्मृति पर आधारित मौखिक गवाही की अपेक्षा अधिक सटीक और निष्पक्ष हो सकते हैं। इसलिए मौखिक साक्ष्य में मौजूद छोटे-मोटे विरोधाभासों की स्थिति में भी विश्वसनीय इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य को अधिक महत्व दिया जा सकता है।

were admitted in evidence and marked by the trial court under Section 293 of the Code of Criminal Procedure, 1973, corresponding to Section 329 of the Bharatiya Nagarik Suraksha Sanhita, 2023.

Dealing with the aforesaid contention, the High Court has observed that, Section 79A of the Information Technology Act merely empowers the Central Government to notify a department, body, or agency of the Central Government or State Government as an "Examiner of Electronic Evidence" for the purpose of rendering expert opinion relating to electronic records. Correspondingly, Section 45A of the Indian Evidence Act (Section 39(2) of the Bharatiya Sakshya Adhiniyam) provides that, when the Court has to form an opinion on matters relating to electronic or digital evidence, the opinion of such notified Examiner of Electronic Evidence becomes a relevant fact. The provision only creates an additional statutory mechanism for obtaining expert opinion in relation to electronic evidence. However, neither Section 79A of the Information Technology Act nor Section 45A of the Indian Evidence Act lays down that, in the

सेवा में,

श्रीमान अतिरिक्त निदेशक अभियोजन (न्याय) महोदय,
अभियोजन निदेशालय, राजस्थान सरकार,
जयपुर।

विषय - प्रशिक्षण सामग्री के सम्बन्ध मे
प्रसंग - प 25(1)(1) प्रशिक्षण / विविध / अभि / 2026-01279
दिनांक 26/5/26

माननीय महोदय,

उपर्युक्त विषयान्तर्गत नम्र निवेदन है कि कानूनी प्रावधानों के साथ-साथ, भारतीय न्याय संहिता, भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता तथा भारतीय साक्ष्य अधिनियम के प्रावधानों के साथ-2 निम्न न्यायिक दृष्टान्तों के आधार पर श्रीमान जी प्रदान किया गया एजेण्डा स्पष्ट किया जायेगा -

(1) गिरफ्तारी, गिरफ्तारी में अनुसंधान अधिकारी और अभियोजन
(A) विहान कुमार V/S हरियाणा राज्य और अन्य (2025) 5 SCC 799
(B) पंकज बंसल V/S भारत संघ और अन्य (2024) 7 SCC 576
(C) मिहिर राजेश शाह V/S महाराष्ट्र राज्य और अन्य 2025 SC 5554

(2) आवाज नमूना -
(A) राहुल अग्रवाल V/S पश्चिमी बंगाल राज्य और अन्य AIR 2025 SC 4928
(B) रितेश सिन्हा V/S उत्तर प्रदेश और अन्य (2019) 8 SCC 1

(3) समान :-
CBI V/S मीर उस्मान 2025

(4) साक्ष्य की व्याख्या एवं विश्लेषण का सत्य निर्धारण
(A) अर्जुन पण्डित राव खोतकर V/S कैलाश कुशनराव गोरन्ताल्याल
पी.वी. अनवर V/S पी.के. बशीर
पुणे बार एसोसिएशन V/S भारत संघ 2026

P.T.O

दिनांक 12/6/26 को श्रीमान जी के आदेशानुसार प्रशिक्षण प्रदान किया जायेगा ।

संलग्न :- अन्य सामग्री एवं
माननीय सर्वोच्च न्यायालय
की नजीर

भवदीय

डॉ. चन्द्र प्रकाश
सहायक निदेशक अभियोजन
CJM Court [illegible]